सत्यमेव जयते
Government of India
Ministry of Tribal Affairs

UNDP
Empowered lives.
Resilient nations.

वन अधिकार अधिनियम, 2006

पर

अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्न

सत्यमेव जयते
Government of India
Ministry of Tribal Affairs

UNDP
Empowered lives.
Resilient nations.

वन अधिकार अधिनियम, 2006

पर

अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्न

अशोक पै
Ashok Pai
संयुक्त सचिव
Joint Secretary
टेली/Tele : 23073489
फैक्स/Fax : 23070489

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
जनजातीय कार्य मंत्रालय
MINISTRY OF TRIBAL AFFAIRS
शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110001
SHASTRI BHAWAN, NEW DELHI-110001
E-mail : ashokpai@nic.in
Website : www.tribal.gov.in

प्रस्तावना

अनुसूची जनजातियां भारत में सबसे वंचित सामाजिक–आर्थिक समूहों में से एक है। ''तीव्र, स्थायी और अधिक समावेशी विकास'' पर ध्यान देने के साथ, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े समूहों की समस्याओं को शामिल किया जाना चाहिए ताकि विकास समावेशी हो सके।

अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 (एफ.आर.ए.) का अधिनियमन जनजातीय सशक्तीकरण के इतिहास में भारत के संसद द्वारा पारित एक महत्वपूर्ण कानून है जो विशेष रूप से वनों और वन भूमि की आवधिक सुरक्षा से संबंधित है। यह, पीढ़ियों से ऐसे वनों में रह रहे वन निवासियों तथा जिनके अधिकार अभिलेखित नहीं हो पाए, उनको वन अधिकारों की मान्यता देने, वनाधिकार प्रदान तथा अभिलेखित करने के उद्देश्य से बना गया कानून है, जिसका प्रयोजन एक गंभीर ऐतिहासिक अन्याय को समाप्त करना है।

अधिनियम का लाभ कमजोर वन निवासियों तक तभी पहुंचेगा, जब क्रियान्वयन ठोस ढंग से तथा अधिनियम की मूल भावना के अनुरूप हो। एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन को भारत के माननीय प्रधानमंत्री ने अत्यधिक महत्वपूर्ण माना है और जनजातीय कार्य मंत्रालय ने राज्यों को इसे एक अभियान के रूप में कार्यान्वित करने का आग्रह किया है।

मुझे यह बताते हुए खुशी हो रही है कि कई राज्यों में विशेष रूप से व्यक्तिगत अधिकारों की मान्यता के मामले में एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन में काफी प्रगति हुई है। तथापि, सामुदायिक अधिकारों को मान्यता देने की दिशा में अधिक प्रयास किए जाने और पारिस्थितिक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए, सी.एफ.आर. के स्थायी प्रबंधन के लिए तंत्र स्थापित करने की आवश्यकता है, जिससे वन निवासियों के लिए स्थायी आजीविका सुनिश्चित हो सके।

जनजातीय कार्य मंत्रालय, यू.एन.डी.पी. के साथ सहभागिता से जनजातीय कार्य मंत्रालय–एन.डी.पी. परियोजना के तहत वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन में शामिल सरकारी पदाधिकारियों और अन्य हितधारकों के लिए अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्न (एफ.ए.क्यू.) का दूसरा संस्करण ला रहा है। मुझे आशा है कि यह पुस्तिका विभिन्न सवालों का निराकरण करेगी, जो, इस विषय में प्रभावी कार्यान्वयन के लिए राज्यों द्वारा समय–समय पर उठाए जाते हैं। मुझे उम्मीद है कि यह कार्यान्वयन से संबंधित विशिष्ट मुद्दों को स्पष्ट करेगा और धरातल पर कार्यान्वयन में मदद करने के लिए परिभाषाओं पर वैचारिक स्पष्टता लाएगा। परामर्श, कार्यशालाओं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए एक संदर्भ दस्तावेज के रूप में भी इस पुस्तिका का इस्तेमाल किया जा सकता है।

मैं इस प्रकाशन को लाने के लिए यू.एन.डी.पी. तथा इसे समेकित करने के लिए विशेष रूप से सुश्री शमोना खन्ना का आभारी हूं।

अशोक पै

Empowered lives.
Resilient nations.

प्रस्तावना

अनुसूचित जनजाति तथा अन्य परंपरागत निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006, जिसे आमतौर पर वन अधिकार अधिनियम के रूप में जाना जाता है, एक ऐतिहासिक उपलब्धि है जो वन निवासी समुदायों के अधिकारों और आजीविकाओं को सुनिश्चित करता है। देश भर में राज्य सरकारों को वन अधिकार अधिनियम को क्रियान्वित करने और वन निवासी समुदायों के अधिकारों की रक्षा करने का महत्वपूर्ण कार्य सौंपा गया है।

यह महत्वपूर्ण है कि राज्य सरकार के अधिकारी और स्थानीय प्रशासन संस्थाएं, इन प्रयासों के मोर्चे पर, अधिनियम की जानकारी से लैस हैं और यह भी जानते हैं कि प्रायः समाज के हाशिये पर रहने वाले वन समुदायों के बीच इसके प्रावधानों को वास्तविक रूप में कैसे क्रियान्वित किया जाए। समुदायों को दावों को भरने और उन अधिकारों को हासिल करने में शामिल प्रक्रियाओं को समझने की भी आवश्यकता होती है, जिनके वे हकदार हैं।

जनजातीय कार्य मंत्रालय और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) के बीच सहभागिता के माध्यम से अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्नों का यह प्रकाशन, इस चुनौती को हल करने का एक प्रयास है। इसमें, राज्य सरकारों और स्थानीय सामुदायिक संस्थानों जैसे ग्राम सभाओं द्वारा इस महत्वपूर्ण कानून को लागू करने के लिए अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्नों के जवाबों को एक साथ प्रस्तुत किया गया है।

हम इस व्यापक पुस्तक के लिए जनजातीय कार्य मंत्रालय और संसाधन टीम की सराहना करते हैं। हम आशा करते हैं कि वन निवासियों को सुरक्षित और उसके अधिकारों को संरक्षित करने की उनकी सामान्य जिज्ञासा पूरी करने में यह राज्य सरकारों और वन समुदायों को सशक्त बनाएगा, ताकि वन अधिकार अधिनियम के विज़न को साकार किया जा सके।

(जैको सिल्लीअर्स)
कन्ट्री डायरेक्टर

UNDP in India ● 55, Lodi Estate, Post Box No. 3059, New Delhi 110 003, India
Tel : 91-11-4653 2333 ● Fax : 91-11-2462 7612 ● Email : registry.in@undp.org ● www.in.undp.org

विषय वस्तु

वन अधिकार अधिनियम की कार्यान्वयनकी प्रक्रिया

ग्राम सभा और इसकी बैठकें

एफआरए की प्रयोज्यता

वन निवासी अनुसूचित जनजाति तथा अन्य परंपरागत वन निवासी के लिए पात्रता मानदण्ड

विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह

लघु वन उत्पाद

वन ग्रामों तथा असर्वेक्षित ग्रामों का राजस्व ग्राम में परिवर्तन

अधिकार पत्र और अधिकारों का रिकार्ड

सामुदायिक वन संसाधन अधिकार

जेएफएम समितियों की स्थिति

विकास और एफ.आर.ए.

विविध

संक्षेप आक्षर एवं परिवर्णी शब्द

वन अधिकार अधिनियम की कार्यान्वयन की प्रक्रिया

वन अधिकार अधिनियम के तहत वन अधिकारों की पहचान के लिए आवेदन प्रस्तुत करने की क्या कोई समय-सीमा है ?

आवेदन प्राप्त करने की कोई समय-सीमा नहीं है। ग्राम सभाओं द्वारा आवेदन की प्रक्रिया वन अधिकार नियमों, विशेष रुप से नियम-11(1)(क) के अनुसार की जानी होती है, जिसमें प्रावधान है कि ग्राम सभा दावे आमंत्रित करेगा तथा दावों को स्वीकार करने के लिए वन अधिकार समिति को प्राधिकृत करेगा। चूंकि ग्राम सभा ''वैयक्तिक अथवा सामुदायिक वन अधिकारों या दोनों की प्रकृति और विस्तार निर्धारित करने की प्रक्रिया प्रारंभ करने के लिए प्राधिकृत है'', प्रक्रिया की शुरुआत ग्राम सभा द्वारा की जानी चाहिए, ना कि वन अधिकार समिति द्वारा।

ऐसे दावे, दावों को आमंत्रित करने की तिथि के तीन महीने की अवधि के भीतर किए जाने चाहिए। ग्राम सभा यदि आवश्यक समझे तो, कारण दर्ज करने के पश्चात इसकी स्वीकृति अवधि बढ़ा सकती है।

वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन और दावों की प्रक्रिया बंद करने के संबंध में अंतिम तिथियां निर्दिष्ट क्यों नहीं हैं ?

वन अधिकार अधिनियम का प्रयोजन देश के सबसे गरीब और सबसे अधिक वंचित लोगों के अधिकारों की पहचान करना है। ऐसे समुदाय प्रायः लंबे समय तक ऐसे कानून की विद्यमानता के बारे में जानते नहीं होंगे। अंतिम तिथि लागू करने से, उनके अधिकारों के बारे में सूचित करने में राजतंत्र की असफलता की सजा उन्हें भुगतनी पड़ेगी।

कई राज्य/संघ राज्य क्षेत्र अभी भी कार्यान्वयन कार्य के प्रारंभिक चरण में हैं और अभी भी उन्हें एक लंबा रास्ता तय करना है। क्योंकि एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन की मात्रा का मूल्यांकन ग्राम सभा द्वारा किया जाएगा, इसलिए, कट-ऑफ (अंतिम) तारीख का निर्धारण, ग्राम सभा द्वारा किया जाना ही उत्तम होगा। यह समझना भी महत्वपूर्ण है कि अंतिम तिथियां नए अतिक्रमण के विनियमन की योजनाओं के मामले से संबंधित है। चूंकि वन अधिकार अधिनियम अतिक्रमण के विनियमन से संबंधित कानून नहीं है, किन्तु 13 दिसंबर, 2005 को विद्यमान उपयुक्त दावेदारों की पहचान और उन्हें वन अधिकार निहित करने हेतु केवल कानून मात्र है, अतः अंतिम तिथि आवश्यक नहीं है। राज्य वन विभागों के संज्ञान में आने वाले किसी नए अतिक्रमण को, वन अधिकार अधिनियम, 1927 तथा राज्य स्तर के अन्य कानूनों के लागू प्रावधानों के तहत निपटाया जाएगा।

क्या जिलाधीश अपनी शक्तियां राजस्व संभागीय अधिकारी को अधिकार पत्रों पर हस्ताक्षर के लिए प्रत्यायोजित कर सकते हैं ?

वन अधिकार नियमों के अनुलग्नक– II और III के अनुसार, वन भूमि के अधिकार पत्र और सामुदायिक वन अधिकारों पर जिलाधीश/उपायुक्त द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिएं। यह शक्ति, वन अधिकार नियमों के नियम 8(ज) के तहत जिला–स्तरीय समिति के कार्यों में निहित है, और इसीलिए, इसे राजस्व संभागीय अधिकारी अथवा किसी अन्य कार्मिक को प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता।

क्या, वन अधिकार अधिनियम के तहत वन अधिकारों की पहचान और निहितता से संबंधित अपने कार्यों के प्रतिपादन में ग्राम सभा की सहायता के लिए, ग्राम सभा वन अधिकार समिति के अलावा, किसी अन्य व्यक्ति वाली समिति ग्राम सभा के कार्य में सहयोग के लिए गठित की जा सकती है ?

वन अधिकार अधिनियम और वन अधिकार नियम, नियम– 4(1)(ड.) के तहत वन अधिकार समिति के अलावा किसी अन्य समिति के गठन की अनुमति नहीं देते हैं। न ही वे वन अधिकार अधिनियम के तहत वन अधिकारों की पहचान और प्रदायगी से संबंधित अपने कार्यों को प्रतिपादित करने में ग्राम सभा की सहायता के लिए, ग्राम सभा के सदस्यों के अलावा, अन्य व्यक्तियों वाली किसी समिति के गठन की अनुमति देते हैं। वास्तव में, ऐसी किसी समिति द्वारा की गई कार्रवाई/निर्णय निष्प्रभावी तथा बिना किसी कानूनी आधार के होंगे।

नगरपालिका क्षेत्रों के मामले में उप–संभाग स्तरीय समिति के सदस्य कैसे नियुक्त किए जाते हैं ?

जहां तक ग्रामीण क्षेत्रों का प्रश्न है, उप–संभाग स्तरीय समिति, पूरी तरह से वन अधिकार नियमों के नियम–5 के प्रावधानों के अनुसार गठित की जानी चाहिए। तथापि, नगरपालिका क्षेत्रों में वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन के समय, फा.सं. 19020/02/2012–एफ.आर.ए. (खंड II) दिनांक 05.03.2015 के जनजातीय कार्य मंत्रालय के परिपत्र द्वारा जारी दिशानिर्देशों का अनुपालन किया जाना चाहिए। ये, विशेष रुप से, खंड 3.5में निम्नानुसार उल्लेखित किए गए है :–

''3.5नगरपालिका क्षेत्रों में उप–संभाग स्तरीय समिति और संभाग स्तरीय समिति के घटक निम्नानुसार होंगेः

(क) संविधान की छठी अनुसूची के तहत शामिल नहीं किए गए नगरपालिका क्षेत्रों में, वन अधिकार नियमों के नियम

(ख) ५(ग) में निर्धारित, एसडी.एल.सी. में पंचायती राज संस्थानों के तीन प्रतिनिधियों को, उप–संभाग में नगरपालिका/नगरपालकाओं द्वारा नामित प्रतिनिधियों से प्रतिस्थापित किया जाएगा; जिनमें कम–से–कम दो अनुसूचित जनजाति (अ.ज.जा.) के, प्राथमिकता के तौर पर जो वन निवासी, अथवा विशेष रुप से कमजोर जनजातीय समूह के हों, तथा जहां अनुसूचित जनजातियां नहीं हैं, दो सदस्य जो प्राथमिकता के तौर पर अन्य परंपरागत वन निवासी हों तथा उनमें एक महिला सदस्य होगी;

बशर्ते कि, जहां उप–संभाग में एक से अधिक नगरपालिका है, वहां निवासरत जनजातीय

आबादी के घटते क्रम में विभिन्न नगरपालिकाओं से सदस्य नामांकित किए जाएंगे।''

क्या दावों को निरस्त अथवा स्वीकृत करने के ग्राम सभा के निर्णय पर पुनः विचार किया जा सकता है ?

ग्राम सभा और उप–संभाग स्तरीय समिति के निर्णय अपील के अध्याधीन होते हैं तथा इसलिए उस चरण में उन पर पुनर्विचार किया जा सकता है। जहां एस.डी.एल.सी. अथवा डी.एल.सी.यह देखती है कि ग्राम सभा का निर्णय अपूर्ण है, अथवा प्रथम दृष्ट्या अतिरिक्त जांच की आवश्यकता है, वहां इसे संशोधित करने अथवा निरस्त करने के बजाय पुनर्विचार के लिए ग्राम सभा को दावा पुनः प्रेषित करना चाहिए (नियम 12 क (6) देखें)। जहां एस.डी.एल.सी. अथवा डी.एल.सी. ग्राम सभा के निर्णय को निरस्त अथवा आशोधित करते हैं, उन्हें ऐसा करने का विस्तृत कारण देना चाहिए (नियम 12 क (10) देखें)। इसके अतिरिक्त, एफ.आर. नियमों में प्रावधान है कि दावे को केवल तकनीकी अथवा प्रक्रियागत कारणों से निरस्त नहीं किया जाना चाहिए (नियम 12 क (10) देखें)।

इसके अलावा, जहां अपर्याप्त साक्ष्यों के आधार पर दावे निरस्त किए गए हैं, वहां न केवल ग्राम सभा के निर्णय, अपितु एस.डी.एल.सी. और डी.एल.सी. के निर्णय पर भी पुनः विचार किया जा सकता है। देश के कई हिस्सों में, साक्ष्यों की कमी अथवा पूर्ण साक्ष्यों के आधार पर दावे निरस्त किए जाते हैं। राजस्व और भू–संदर्भित मानचित्रों द्वारा ग्राम सभा की सहायता के लिए एस.डी.एल.सी. से अनुरोध करने हेतु एफ. आर. नियमों के नियम ६(ख) पर निर्भर जनजातीय कार्य मंत्रालय ने दिनांक 27.07.2015 का परिपत्र (फा.सं. 23011/18/2015–एफ.आर.ए. से संबंधित) जारी किया था। इस आधार पर, यह उल्लेख किया गया है कि अपर्याप्त साक्ष्यों के आधार पर निरस्त दावे अथवा जहां प्रथम दृष्ट्या अतिरिक्त साक्ष्यों की आवश्यकता है वहां पुनः जांच की जानी चाहिए।

क्या डी.एल.सी. के आदेश के विरुद्ध अपील दायर की जा सकती है ?

एफ.आर.ए. की धारा 6(6) में स्पष्ट रुप से उल्लेख है कि डी.एल.सी. का निर्णय अंतिम एवं बाध्यकारी है। अतः अपील की संवैधानिक प्रक्रिया डी.एल.सी. के साथ समाप्त हो जाती है।

तथापि, यह भी आवश्यक है कि आवेदन के निरस्तीकरण के संबंध दावेदार अथवा दावेदारों को कारण बताए जाने चाहिएं, ताकि वे कोई अन्य कानूनी प्रक्रिया अपना सकें जैसे की संवैधानिक न्यायालयों में याचिका दायर करना अथवा कानून में उपलब्ध किसी अन्य अवसर का उपयोग करना।

यदि डी.एल.सी. का निर्णय वन अधिकार अधिनियम अथवा नियमों के किसी प्रावधान के उल्लंघन में है, तो धारा 8 के तहत राज्य स्तरीय निगरानी समिति को नोटिस के साथ ग्राम सभा द्वारा कार्यवाही आरंभ की जा सकती है।

विशेष रुप प्रशासित क्षेत्रों जैसे के गोरखालैंड प्रादेशिक प्रशासनिक क्षेत्र में वन अधिकार अधिनियम, 2006 के कार्यान्वयन के लिए सक्षम प्राधिकारी कौन है ?

वन अधिकार अधिनियम और वन अधिकार नियमों में पंचायती राज कानूनों द्वारा प्रशासित क्षेत्रों और छठी अनुसूची के क्षेत्रों में एस.डी.एल.सी. तथा डी.एल.सी. की सदस्यता स्पष्ट रुप से निर्धारित है। तथापि, कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जो दोनों में से किसी के द्वारा प्रशासित नहीं होते है, इसीलिए ऐसे क्षेत्रों में ग्राम

सभा, एस.डी.एल.सी. एवं डी.एल.सी. के गठन के संबंध में प्रश्न उत्पन्न होता है।

गोरखालैंड प्रादेशिक प्रशासनिक क्षेत्र (जी.पी.ए.) के परिप्रेक्ष्य में, जो गोरखालैंड प्रादेशिक प्रशासन अधिनियम, 2011 (जो ''2011अधिनियम'' के नाम से ज्ञात है) तथा पश्चिम बंगाल पंचायत अधिनियम, 1973 (जो "1973 अधिनियम" के नाम से ज्ञात है) द्वारा प्रशासित है, मंत्रालय ने फा.सं. 23011/11/2013–एफ.आर.ए. के माध्यम से दिनांक 08.10.2015 को स्पष्टीकरण जारी किया था। मंत्रालय ने पाया था कि 1973 के अधिनियम की धारा 2(13) के तहत ''मौजा'' की परिभाषा, जहां ''किसी गांव को निर्दिष्ट करने के लिए सार्वजनिक अधिसूचना के उद्देश्य से क्षेत्र की न्यूनतम इकाई के रुप में की गई है। किसी जिले के राजस्व रिकार्ड में यथापरिभाषित, निचली इकाई'',के रुप में उल्लेख किया गया है, जो वन अधिकार अधिनियम की धारा 2(छ) के तहत ''ग्राम सभा'' की परिभाषा के काफी समान है। यही परिभाषा ग्राम सभा के गठन के लिए अपनाई जा सकती है। जिसके अनुसार परिणामतः इसके साथ वन अधिकार अधिनियम की धारा ६ के तहत वन अधिकारों की पहचान और प्रदायगी की प्रक्रिया आरंभ तथा इस कार्य के लिए अपने सदस्यों के बीच से वन अधिकार समिति गठित की जाएगी।

ऐसे कई क्षेत्रों में, जो शासन के परिवर्तन के चरण में हैं, वहां कई कारणों से कोई निर्वाचित पंचायत निकाय नहीं है, ऐसी स्थिति में, वन अधिकार नियमों के नियम 5(ग) और नियम 7(ग) के तहत एस.डी.एल.सी. और डी.एल.सी. के गठन के उद्देश्य से, ब्लॉक/तहसील स्तरीय पंचायत के ३ सदस्य और जिला पंचायत के ३ सदस्यों को, गोरखालैंड प्रादेशिक प्रशासन अथवा समान निकाय के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा स्थापन्न किया जा सकता है। वन अधिकार नियमों के नियम 3(1) के तहत वन अधिकार समिति (एफ.आर.सी) के गठन के लिए ग्राम सभा की पहली बैठक गोरखालैंड प्रादेशिक प्रशासन अथवा समान निकाय द्वारा आयोजित की जा सकती है।

इसके उपरांत वन अधिकार अधिनियम, 2006 के तहत निर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार, वन अधिकार नियमों तथा समय–समय पर इस मंत्रालय द्वारा जारी विभिन्न दिशानिर्देशों का वन अधिकारों की पहचान और प्रदायगी निहित करने हेतु अनुपालन किया जा सकता है।

ग्राम सभा और इसकी बैठकें

क्या अनुसूचित और गैर अनूसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभाओं का अलग से गठन और उनकी बैठकों का आयोजन आवश्यक है ?

एफ.आर.ए. के प्रयोजन से ग्राम सभा और ग्राम शब्दों को अधिनियम की धारा 2(छ) और 2(त) में परिभाषित किया गया है जिसमें किसी वन्य गांव, पुरानी बस्ती या कस्बा और असर्वेक्षित गांव को ग्राम के तौर पर माना जा सकता है। ऐसी इकाइयों को, यदि, अधिसूचित नहीं किया गया है, या ग्राम के तौर पर पंजीकृत नहीं किया गया है तो भी उन्हें इस अधिनियम के प्रयोजन हेतु ग्राम माना जाएगा।

वन अधिकार नियमावली (यथा संशोधित 06.09.2012) में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि पांचवी अनुसूची के क्षेत्रों के दायरें में आने वाले ग्रामों के मामले में भी जहां पेसा (पी.ई.एस.ए.) लागू है, ग्राम/कस्बा पर ग्राम सभाएं गठित की जाएं।

इसका अर्थ है कि अनुसूचित अथवा गैर अनुसूचित क्षेत्रों में कस्बा स्तर पर या ग्राम स्तर पर ग्राम सभाएं बनाई जाए।

देश के विशेष भागों में आबादी का घनत्व इतना कम है कि एक ग्राम में केवल मुठी भर लोग होते हैं। ऐसे गांवों में वन अधिकार समितियों का गठन किस प्रकार किया जाए ?

एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन के लिए एफ.आर.ए. की धारा 2(त)(1) के तहत 'ग्राम' की पेसा (पी.ई.एस.ए.) में दी गई परिभाषा को अपनाया जा सकता है। यह प्रावधान, जो कि अनुसूचित और गैर अनुसूचित क्षेत्रों के लिए उपलब्ध है। 'बस्ती या बस्तियों के समूह या कस्बा या कस्बों के समूह जो एक समुदाय के रूप में हों और अपनी परंपराओं तथा रीति–रिवाजों के अनुसार अपने कार्यों का प्रबंधन कर रहे हों' (देखें : पेसा की धारा 4 (ख)) को ग्राम सभा बनाने के लिए अनुमत्त करता है। इसलिए, ऐसे गांवों के मामले में जहां आबादी का घनत्व बहुत कम है जैसे हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और अन्य राज्यों के ऊपरी हिमालयी क्षेत्रों की समूहों की संयुक्त ग्राम सभा मिलकर, एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन के लिए एक वन अधिकार समिति का गठन कर सकती है।

क्या एफ.आर. के प्रयोजन के लिए ग्राम पंचायत स्तर पर ग्राम सभाओं का गठन और आयोजन किया जा सकता है ?

एफ.आर.ए. के प्रयोजन के लिए ग्राम पंचायत स्तर पर ग्राम सभा को आमंत्रित नहीं किया जा सकता। एक ग्राम पंचायत में सामान्यतः एक से अधिक राजस्व गांव होते हैं। एफ.आर.ए. के प्रावधानों के अनुसार, ग्राम सभा का आयोजन गांव/बस्ती स्तर पर किया जाना चाहिए। क्योंकि एफ.आर.ए. के तहत ग्राम सभा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, इसलिए, महत्वपूर्ण है कि इसे वास्तविक बस्तियों और गांवों के स्तर पर ही आमंत्रित किया जाए जहां लोग एक दूसरे से परिचित हों। एफ.आर.ए. के प्रयोजन से 'ग्राम सभा' और 'गांव' शब्द अधिनियम की धारा 2(छ) और 2(त) में परिभाषित किया गया है।

पंचायत द्वारा ग्राम सभा की पहली बैठक के बाद, बैठकों की अध्यक्षता कौन करेगा ? क्या एफ.आर.ए. के अनुसार पंचायत सचिवों के लिए ग्राम सभा की सभी बैठकों में भाग लेना आवश्यक होगा ?

वन अधिकार नियमों के तहत पंचायत के लिए, ग्राम सभा की प्रथम बैठक का आयोजन करना आवश्यक है ताकि वन अधिकार समिति का गठन किया जा सके और प्राथमिक निर्णय लिए जा सकें। इस चरण में एफ.आर. के लिए अध्यक्ष और सचिव का चयन, महत्वपूर्ण निर्णय होते हैं (देखेः नियम 3(2), एफ.आर. नियम)।

इस बैठक में पंचायत सचिव की उपस्थिति आवश्यक है। इसके पश्चात वन अधिकार समिति और ग्राम सभा को अपना कार्य जारी रखने के लिए स्वतंत्र किया जा सकता है तथा तत्पश्चात, प्रत्येक ग्राम सभा की बैठकों में पंचायत सचिव की उपस्थिति न तो आवश्यक है और न ही कानून के अनुसार अपेक्षित है।

वन अधिकारों के 50% दावेदारों (नियम 4(2) के तहत) की उपस्थिति के खंड को शामिल क्यों किया गया है ? क्या ऐसे 'कोरम' को पूरा करना कठिन नहीं होगा, विशेष कर कम घनत्व की आबादी वाले राज्यों में ?

2008 में जब एफ.आर. नियमों को प्रथम बार अधिसूचित किया गया था, 'कोरम' में ग्राम सभा के सभी सदस्यों का दो– तिहाई (2/3) सदस्य होते थे। इस अनुभव के आधार पर कि इस प्रकार के कोरम को पूरा करना प्रायः कठिन होता है, संसद द्वारा वर्ष 2012 में नियम 4(2) में संसद द्वारा संशोधन करके उसे 50% कर दिया गया है ।

ग्राम सभा की बैठकों में 50% कोरम पूरा होना इसलिए आवश्यक है ताकि निर्णय लेने में अधिक पारदर्शिता और सहभागिता सुनिश्चित की जा सके। एफ.आर. नियमावली के नियम 4(2) ये भी प्रावधान करता है कि एफ.आर.ए. के तहत कम से कम एक तिहाई महिला तथा कम से कम 50% दावाकर्ता/अधिकार धारकों की उपस्थिति होनी चाहिए ?

अनेक राज्यों में 1994 के अधिनियम के तहत न्यूनतम कोरम[1] पूरा न कर पाने का कारण, ग्राम सभा बैठकों का आयोजन पंचायती स्तर पर किया जाता है। इन बैठकों में भाग लेने के लिए सदस्यों कोप्रायः दुर्गम क्षेत्रों में, पैदल चलना पड़ता है। तथापि, एफ.आर.ए. के तहत ग्राम सभा की बैठकें राजस्व गांवों या कस्बों में आयोजित की जाती हैं जो कि सभी सदस्यों की पहुंच में होती हैं और एफ.आर.ए. नियमों के तहत बैठकों में अपेक्षित 50% कोरम पूरा होने में कोई कठिनाई नहीं होती है। गांव के सभी व्यस्क सदस्य इन बैठकों में भाग लेते हैं न कि सिर्फ प्रत्येक परिवार से एक प्रतिनिधि भाग लेता है।

एफआरए की प्रयोज्यता

वे कौन–कौन से क्षेत्र हैं जहां एफ.आर.ए.प्रयोज्य है ? क्या सारे राज्य में एफ.आर.ए. की प्रयोज्यता का विस्तार आवश्यक है या इसे कुछ ही विशिष्ट क्षेत्रों तक सीमित किया जा सकता है।

एफ.आर.ए. की धारा, (2) में यह स्पष्ट तौर पर उल्लेखित है कि यह कानून समस्त भारत में लागू है1[2] धारा3(2) में विभिन्न वन अधिकारों का उल्लेख किया गया है जिन्हें एफ.आर.ए. के तहत 'सभी–भूमियों' के लिए मान्यता और प्रदानगी की गई है।

गोदावर्मन मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए एक ऐतिहासिक निर्णय में कहा है कि वन संरक्षण अधिनियम, 1980 की धारा 2 में आने वाला शब्द 'वन भूमि' में न केवल 'वन, जैसा कि शब्दकोश में मान्य है, अपितु स्वामित्व से हटकर सरकारी रिकार्ड में दर्ज वन के तौर पर दर्ज कोई भी क्षेत्र शामिल है'।[3] तभी से यह एक स्थापित कानून है कि 'वन भूमि' शब्द को, वनों और वन संसाधनों के संरक्षण और बचाव पर रक्षात्मक विधान के कार्यान्वयन के प्रयोजन से बृहद परिप्रेक्ष्य में माना जाए।

एफ.आर.ए. की धारा 2(घ) के तहत 'वन भूमि' शब्द की व्याख्या अघोषित वनों, विद्यमान या मान्य–वनों, संरक्षित वनो, आरक्षित वनों, अभ्यारण्यों और राष्ट्रीय पार्कों सहित, किसी भी वन में आने

[1] हिमाचल प्रदेश पंचायती राज अधिनियम, 1994 की धारा 5(3) के तहत ग्राम सभा बैठक के लिए अपेक्षित कोरम ''ग्राम सभा के एक अथवा एक से अधिक सदस्यों द्वारा परिवारों की कुल संख्या के प्रतिनिधियों का एक तिहाई'' है

[2] जम्मू और कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2015 की धारा 95 (1) के तहत पांचवीं अनुसूची का खंड 97; एफआरए, 2006 की धारा 1 की उपधारा (2) में संशोधन प्रदान करता है, जैसे कि, "जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर" ये शब्द हटा दिए गए हैं ?

[3] टी.एन. गोदावर्मन तिरुमलपाद बनाम भारत संघ एवं अन्य (1997) 2 एससीसी 267 @ अनुच्छेद 4

वाले विवरण और अवर्गीकृत के तौर पर की गई है। इस व्याख्या का सर्वोच्च न्यायालय के उपर्युक्त निर्णय के अनुसार सख्ती से अनुपालन किया जा रहा है।

तदनुसार, वन भूमि की परिभाषा में ऐसी भूमियां भी शामिल हैं जो अप्रयुक्त भूमियां (वेस्टलैंड) होने (देखें :अधिसूचना सं. एफटी 29-241-बीबी/49 दिनांक 25.02.1952) या हि.प्र. ग्रामीण साझा भूमि प्रदायगी और उपयोग अधिनियम 1974 तथा उसके तहत बने नियमों के प्रावधानों के अंतर्गत (देखें: धारा 8(1)(क) और नियम 6(1)(6)), के कारण भारतीय वन अधिनियम, 1927 के दायरे में आती हैं

क्या एफ.आर.ए. राष्ट्रीय उद्यानों, वन्य जीवन अभ्यारण्यों और टाइगर रिजर्वों पर भी लागू होता है ?

हां, जैसा कि धारा 2(घ) में वन भूमि की परिभाषा निम्नानुसार दी गई है। 'किसी भी प्रकार की भूमि जो वन क्षेत्र में आती है, जिसमें अभ्यारण्य और राष्ट्रीय उद्यान' भी शामिल हैं ।

एफ.आर.ए. में पूर्व विद्यमान उन अधिकारों को ही मान्यता प्रदान की गई है जिन्हें पात्र व्यक्ति राष्ट्रीय उद्यानों और अभ्यारण्यों में भी प्रयोग कर रहे हैं। पूर्व वन निवासी की अवधि सुरक्षा को छोड़कर, कोई नये अधिकार सृजित नहीं किए जा रहे है जिनसे संरक्षित क्षेत्रों के अंदर पारिस्थितिकीय संतुलन पर गहरा कुप्रभाव पड़े।

इसके अतिरिक्त ऐसे वन अधिकारों से जहां वन्य जीवन को अपूर्णीय क्षति पहुंचती हो, एफ.आर.ए. के तहत (देखें: धारा 4(2), अधिकारों की मान्यता के पश्चात एक जनांककीय और पारदर्शी प्रक्रिया के माध्यम से ऐसे 'संकटग्रस्त वन्य जीव पर्यावास' ('क्रिटिकल वाइल्ड लाइफ हैबिटेट्स') में 'संवेदनशील वन्य जीवन क्षेत्र 'क्रिटिकल वाइल्ड लाइफ हैबिटेट्स' तथा 'वन्य जीवन के संरक्षण के लिए अन-उल्लंघनीय क्षेत्रों' के सृजन का प्रावधान किया गया है।

अनेक राष्ट्रीय उद्यानों में लोग जिस भूमि का उपयोग कर सकते हैं उन सभी अधिकारों की प्रदायगी के पश्चात अंतिम रूप से एक अधिसूचना जारी कर दी गई है । क्या उन अधिकारों पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है ?

जैसा कि एफ.आर.ए. की प्रस्तावना में कहा गया है कि इसका प्रमुख उद्देश्य यह है कि उप निवेश काल और स्वतंत्र भारत के समय के दौरान, राज्यों के वनों के समेकनीकरण में पूर्ववर्ती वनों एवं वन्य जीवन की ओर पर्याप्त ध्यान/मान्यता नहीं दी गई थी। इसलिए, एफ.आर.ए. का वर्तमान उद्देश्य चिरकालिक असुरक्षा का निराकरण करते हुए।

इस ऐतिहासिक अन्याय को दूर करना और वनों में रहने वाले समुदायों को उनके अधिकार दिलाना है। इसलिए, एफ.आर.ए. में इस वास्तविकता को स्वीकार किया गया है कि देश के अनेक भागों में 'उपनिवेश-कालिक' कानूनों के तहत 'अधिकारों की स्थापना' परिलिपित खंड़ों, कानूनी संकल्पनाओं और अवधारणाओं के माध्यम से की गई जबकि अनेक क्षेत्रों में ऐसा कहीं कुछ भी नहीं किया गया। इस लक्ष्य कि एक विशेष राष्ट्रीय उद्यान या वन्य क्षेत्र के लिए एक अधिसूचना जारी कर दी गई है, इसलिए, ऐसी वन्य भूमियों में वन अधिकारों की पुनः जांच को नकारा (प्रीक्लूड) नहीं जा सकता।

इसके अतिरिक्त जैसा कि प्रस्तावना में कहा गया हैकि वनों में रहने वाले समुदायों की उत्तरजीवित पूर्णता

जंगलों के पर्यावरणीय संतुलन पर निर्भर करती है इसलिए ऐसे समुदायों को जैवविविधता के संतुलित उपयोग के प्राधिकार और संरक्षण के उत्तरदायित्व से लैस किया गया है। इसलिए, जब पूर्ववर्ती वन्य और वन्यजीवन कानून में अधिकारों को स्थापित करने की मांग की गई है। जबकि वन अधिकारों कोएफ.आर. ए.में मान्यता देने और निहित करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है, ताकि इनके निर्वाह से वनों में रहने वाले समुदायों की आजीविका और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके। परिभाषा की दृष्टि से राष्ट्रीय पार्क भी इसी व्यवस्था के अंतर्गत आते हैं।

क्या वन अधिकार अधिनियम नगरीय क्षेत्रों में भी लागू है ?

वन अधिकार अधिनियम की धारा 1(2) का स्पष्ट पठन यह प्रदर्शित करता है कि यह पूरे भारत के लिए लागू है,[4] इसके प्रयोग से देश के किसी भी भाग को छूट नहीं दी गई है।

वन अधिकार अधिनियम की धारा 2(घ) 'वन भूमि' शब्द को विस्तृत अर्थ में ''किसी भी वन क्षेत्र के भीतर आने वाली किसी भी प्रकार की भूमि'' के तौर पर परिभाषित करती है। वन भूमि की यह परिभाषा प्रदर्शित करती है कि भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने **गोदावर्मन के मामले** में दिनांक 12.12.1996 के अपने निर्णय में इस कानून को लागू किया है।[5] स्पष्टतः वन अधिकार अधिनियम उस वन भूमि के संबंध में लागू है, जहां दावेदार स्थित हैं ? नगरीय क्षेत्रों के लिए कोई छूट नहीं दी गई है।

जनजातीय कार्य मंत्रालय ने दिनांक 29 अप्रैल, 2013 के पत्र (फा.सं.19020/02/2012–एफ.आर. ए.) तथा 5 मार्च, 2015 के पत्र (फा.सं.19020/02/2012–एफ.आर.ए. (खण्ड II)) के माध्यम से स्पष्टीकरण भी जारी करके, यदि कहीं कोई भ्रम होतो उसे खत्म किया गया है।

वन निवासी अनुसूचित जनजाति तथा अन्य परंपरागत वन निवासी के लिए पात्रता मानदण्ड

वन अधिकार अधिनियम के तहत अधिकार हेतु दावा करने के लिए वन निवासी अनुसूचित जनजाति (एफ.डी.एस.टी.) के लिए कौन से मानदंड और साक्ष्य आवश्यक है ?

वन अधिकार अधिनियम की धारा 2(ग) के अनुसार वन अधिकार अधिनियम के तहत अधिकारों की मान्यता की पात्रता के लिए वननिवासी अनुसूचित जनजाति (एफ.डी.एस.टी.) के लिए आवेदक/आवेदकों जो ''सदस्य अथवा समुदाय'' हो सकते हैं के लिए तीन आवश्यक शर्तें हैं :

1. जिस क्षेत्र में दावा किया गया है उसी क्षेत्र का अनुसूचित जनजाति होना चाहिए; और
2. उसे दिनांक 13.12.2005 से पूर्व का उस वन अथवा वनों का प्राथमिक निवासी होना चाहिए; तथा
3. वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं के लिए वन अथवा वन भूमि पर निर्भर होना चाहिए।

---

[4]पूर्व टिप्पण 2

[5]पूर्व टिप्पण 3

क्या अनुसूचित जनजाति से संबंधित व्यक्ति जो राज्य में गैर–अनुसूचित क्षेत्र में चला गया है, वह वननिवासी अनुसूचित जनजाति के रूप में वन अधिकारों का दावा कर सकता है ?

वन निवासी अनुसूचित जनजाति के रूप में दावा करने के लिए वन अधिकार अधिनिमय के तहत आवश्यक है कि वह संबंधित क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति का होना चाहिए। कुछ राज्यों में, लोगों के लिए अनुसूचित जनजाति का दर्जा राज्य के भीतर विशेष क्षेत्र अथवा जिले तक सीमित है। तथापि अन्य राज्यों में संविधान (अनुसूचित जनजाति) आदेश, 1950 के अनुसार पूरे राज्य में अनुसूचित जनजाति की मान्यता है न कि उनके अधिवासी अथवा अनुसूचित क्षेत्र अथवा किसी अन्य प्रकार के भौगोलिक स्थान के क्षेत्र तक।

उदाहरण के लिए, हिमाचल प्रदेश राज्य में लाहौल और स्पीति (जो एक अनुसूचित क्षेत्र है) की अनुसूचित जनजातियों के सदस्य जो मनाली चले गए हैं, जो की कुल्लू जिले का (एक गैर–अनुसूचित क्षेत्र है), फिर भी, राष्ट्रपति के 1950 के आदेश (उपर्युक्त) के तहत अनुसूचित जनजाति बने रहेंगे और राज्य के भीतर उनके प्रवासी होने के स्थिति के कारण ऐसे दर्जे से वंचित नहीं किए गए हैं।

अधिनियम के तहत अधिकारों के दावे के लिए अन्य परंपरागत वननिवासी (ओ.टी.एफ.डी.) के लिए कौन से मानदंड और प्रमाण आवश्यक हैं ?

अन्य परंपरागत वननिवासी (ओ.टी.एफ.डी.) के रूप में वन अधिकार अधिनियम के तहत अधिकारों की मान्यता की पात्रता के लिए दो शर्तों को पूरा करना होगा :

1. दिनांक 13.12.2005 से पूर्व तीन पीढ़ियों (75 वर्ष) से उस वन अथवा वन भूमि का प्राथमिक निवासी हो, और
2. वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं के लिए वन अथवा वन भूमि पर निर्भर हो।

अधिनियम के तहत अधिकारों के दावे के लिए अन्य परंपरागत वननिवासी (ओ.टी.एफ.डी.) के लिए कौन से मानदंड और प्रमाण आवश्यक हैं ?

अन्य परंपरागत वननिवासी (ओ.टी.एफ.डी.) के रूप में वन अधिकार अधिनियम के तहत अधिकारों की मान्यता की पात्रता के लिए दो शर्तों को पूरा करना होगा :

1. दिनांक 13.12.2005 से पूर्व तीन पीढ़ियों (75 वर्ष) से उस वन अथवा वन भूमि का प्राथमिक निवासी हो, और
2. वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं के लिए वन अथवा वन भूमि पर निर्भर हो।

यह भी नोट करना चाहिए कि धारा 2(ण) कहती है कि इस उद्देश्य के लिए ''कोई सदस्य या समुदाय'' और यदि कोई ओ.टी.एफ.डी. गांव स्थापित है तो अधिनियम के तहत इसकी पात्रता के लिए प्रत्येक को व्यक्तिगत रूप से अलग–अलग साक्ष्य की आवश्यकता नहीं है।

वन अधिकार अधिनियम के तहत अन्य परंपरागत वन निवासी (ओ.टी.एफ.डी.) द्वारा अपनी पात्रता स्थापित करने के लिए कौन से दस्तावेज़ी प्रमाण आवश्यक हैं ?

अन्य परंपरागत वननिवासी (ओ.टी.एफ.डी.) के दावे तीन पीढ़िया से भूमि के कब्जे के साक्ष्य की कमी के

आधार पर राज्यों द्वारा निरस्त किए जा रहे हैं, जो कि कानून के अनुसार नहीं है। यह कहना गलत है कि अधिनियम के तहत ओ.टी.एफ.डी. के रूप में पात्रता के लिए 13 दिसंबर, 2005 से पूर्व तीन पीढ़ियों (पचहत्तर वर्ष) से वन भूमि के कब्जे की आवश्यकता होती है।

धारा 2(ण) के तहत आवश्यक है कि वह ''सदस्य अथवा समुदाय'' 13 दिसंबर, 2005 से पूर्व कम से कम तीन पीढ़ियों से उस वन भूमि में प्राथमिक रूप से रह रहा हो और अपनी वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं के लिए वन भूमि पर निर्भर हो।

एक बार यह पात्रता मानदंड पूरे हो जाते हैं तो अधिनियम का अधिकार प्रदाता प्रावधान नामतः धारा 4 वननिवासी अनुसूचित जनजातियों और अन्य परंपरागत अनुसूचित जनजातियों के बीच कोई अंतर नहीं करेगी।

दावा करते समय नियम 13 में विनिर्दिष्ट कोई दो साक्ष्य उपलब्ध कराए जा सकते हैं। दावे के विचारार्थ दस्तावेज़ी साक्ष्य के किसी विशेष रूप पर ज़ोर देने को **आर्च वाहिनी** बनाम **गुजरात राज्य एवं अन्य** में गुजरात उच्च न्यायालय द्वारा अवैधानिक ठहराया गया है।[6]

वन अधिकार अधिनियम के तहत वन अधिकारों की मान्यता और अधिकार प्रदान करने के लिए ओ.टी.एफ.डी. की पात्रता के संबंध में ''वनों अथवा वन भूमि में प्राथमिक रूप से निवासरत'' कहावत का अर्थ क्या है ?

''वनों अथवा वन भूमि में प्राथमिक रूप से निवासरत" कहावत का मतलब व्यवसाय नहीं है। ओ.टी.एफ.डी.के लिए जहां दावा दाखिल किया गया हो,वहां का 75 वर्षों वन में निवास का प्रमाण और वन भूमि पर वर्तमान निर्भरता दवा स्वीकृति के लिए पर्याप्त होगा। जनजातीय कार्य मंत्रालय के दिनांक 09.06.2008 के परिपत्र सं. 17014/02/2007–पीसी एण्ड वी (खण्ड 7) द्वारा स्पष्ट किया गया था कि कहावत ''में प्राथमिक रूप से निवासरत'' का मतलब है:

''ऐसी अनुसूचित जनजातियां और अन्य परंपरागत वननिवासी जो वन के भीतर आवश्यक रूप से निवास नहीं कर रहे हैं बल्कि अपनी वास्तविक आजीविका जरूरतों के लिए वनों पर निर्भर करते हैं, जैसा कि अनुसूचित जनजाति एवं अन्य परंपरागत वननिवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 की धारा 2(ग) तथा 2(ण) में दिया गया है, 'वननिवासी अनुसूचित जनजाति' और 'अन्य परंपरागत वननिवासी' की परिभाषा में शामिल होंगे।''

यह कहना महत्वपूर्ण है कि यह आवश्यक नहीं है कि बिना किसी रुकावट के 75 वर्षों तक वन अधिकारों का प्रयोग सिद्ध हो। यह एक दावेदार के लिए प्रमाण का पूर्णरूप से एक दुर्भर बोझ होगा, जो कानून का उद्देश्य नहीं है।

[6]ऐक्शन रिसर्च इन कम्यूनिटी हेल्थ एण्ड डेवलपमेंट बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, 2010 की पीआईएल सं. 100 में दिनांक 03.05.2013 का निर्णय, गुजरात उच्च न्यायालय

देश में काफी संख्या में वनों को सन् 1950 में अधिसूचित किया गया है। ओ.टी.एफ.डी. कैसे साबित कर सकते हैं कि वह तीन पीढ़ियों (75 वर्षों) से इन वनों में प्राथमिक रूप से निवास कर रहे हैं जबकि वन स्वयं केवल 50 से 60 वर्ष पुराने हैं।

यह कहना महत्वपूर्ण है कि, यदि कोई वन की अधिसूचना की तारीख हो, तो वह वन अधिकार अधिनियम के तहत ओ.टी.एफ.डी. की पात्रता निर्धारित करने के लिए संगत मानदंड नहीं है। इसके विपरीत, यह इसलिए भी असंगत है कि वन अधिकार अधिनियम का विस्तार केवल अधिसूचित और वर्गीकृत वन के लिए ही नहीं बल्कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा परिभाषित शब्दकोष के अर्थ के भीतर सभी तरीके के वनों के लिए लागू है। स्वीकार्यतः जब वन सुरक्षा के लिए कोई वैधानिक व्यवस्था अस्तित्व में नहीं थी, उसके भी पहले सदियों से वन देश में अस्तित्व में हैं।

अपनी पात्रता साबित करने के उद्देश्य से ओ.टी.एफ.डी. नियम–13 में सूचीबद्ध किन्हीं साक्ष्यों में से दो अथवा दो से अधिक साक्ष्य (मौखिक प्रमाण और वास्तविक साक्ष्य सहित) पर निर्भर और प्रस्तुत कर सकते हैं, और केवल भारत की जनगणना के आंकड़ों तक सीमित नहीं हैं।

जब ''75 वर्षों'' की गणना करते हैं, तब यदि दावेदार (और उनके पूर्वज) प्रथम 50 वर्षों के लिए एक गांव में निवासरत रहे हैं और उसके बाद 25 वर्षों के लिए दूसरे गांव में, तो क्या दावा दाखिल करने के लिए दोनों अवधि शामिल की जाएगी ?

अधिनियम की धारा 2(ण) यह अपेक्षा नहीं करती है कि दावेदारों और उनके पूर्वजों को साबित करना है कि वे 75 वर्षों से उसी गांव में रह रहे हैं। आवश्यकता यह है कि वे 75 वर्षों से वननिवासी होने चाहिए। यह स्पष्ट करना भी महत्वपूर्ण है कि यह एक विशेष वननिवासी समुदाय है जिसे इस तथ्य को साबित करना है और यह भी आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक दावेदार व्यक्तिगत रूप से इसे साबित करे।

वन अधिकार अधिनियम की धारा 2(ग) और (ण) में ''वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं के लिए वन अथवा वन भूमि पर निर्भर'' का मतलब क्या है ?

वन अधिकार नियमावली के नियम 2(1)(ख) में ''वास्तविक आजीविका आवश्यकताएं'' शब्द की स्पष्ट रूप से निम्नानुसार व्याख्या की गई हैः

''ख) वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं का मतलब अधिनियम की धारा 3 की उप–धारा 1 में विनिर्दिष्ट किन्हीं अधिकारों के प्रयोग के माध्यम से स्वयं और परिवार की आजीविका आवश्यकताओं को पूर्ण करना और ऐसे अधिकारों का प्रयोग के दौरान अतिरिक्त उपज की बिक्री शामिल है।''

यह परिभाषा इस गलत अवधारणा का निराकरण करती है कि वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं का मतलब मात्र उत्तरजीविता है। वास्तव में पूरा वन अधिकार अधिनियम और वन अधिकार नियमावली स्पष्ट रूप से मान्यता देते हैं कि वननिवासी समुदाय मात्र गुजर–बसर करने तक ही सीमित नहीं है बल्कि जीवन के स्वस्थ स्तर के लिए भी पात्र हैं। वास्तव में धारा 2(ग) और (ण) का स्पष्ट पठन प्रदर्शित करता है कि ''प्राथमिक'' शब्द ''निवास करना'' को मान्यता देता है, लेकिन ''वन और वन भूमि पर निर्भर'' की अपेक्षा से संबंधित ऐसी कोई योग्यता नहीं है।

साधारणतः क्योंकि राज्य में भूमि का एक बड़ा भाग ''वन भूमि'' के रूप में वर्गीकृत है और जनसंख्या का एक बड़ा प्रतिशत वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं के लिए वन पर निर्भर है, यह किसी भी प्रकार से आवेदक को पात्र नहीं बनाता है।

क्या राज्य सरकार किसी स्थायी अथवा सरकारी नौकरी वाले व्यक्तिका दावा अन्य परंपरागत वननिवासी के रूप में अपात्र ठहरा सकती है ?

कानून में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो वन निवासियों को पूर्णरूप से अथवा मुख्यरूप से अपनी आजीविका के लिए सिर्फ वनों पर निर्भर अथवा उन व्यक्तियों जिनकी पारिवारिक आय ऐसे संसाधनों से प्राप्त होती उन्हें अयोग्य माने । इस बात कि काफी संभावना है कि परिवार अपनी आजीविका की आवश्यकताओं के लिए वन अधिकारों पर निर्भर होने के साथ-साथ सरकारी नौकरी अथवा वेतनभोगी आय के माध्यम से अपनी पारिवारिक आय का पूरक हो सकता है। वास्तव में ऐसे बहुत से परिवार हैं जहां एक अथवा ज्यादा सदस्य वैतनिक नौकरी की आवश्यकता के लिए शहरी क्षेत्र में रहते हो, जबकि अन्य पारिवारिक सदस्य वन और वन उपज के साथ जटिल और सतत संबंधों के माध्यम से गांव में निवास करते हैं।

जहां एक जीवनसाथी सरकारी नौकर के रूप में कार्य करता है जबकि बाकी परिवार गांव में निवास करता है तब वन अधिकार अधिनियम के तहत क्या ऐसा परिवार दावा करने के लिए पात्र है ?

ऐसी बहुत सी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती है जबकि एक जीवनसाथी सरकारी नौकर या वैतनिक नौकर के रूप में कार्य करता है और दूसरा जीवनसाथी परिवार के अन्य सदस्यों के साथ गांव में निवास करता है। एक जीवनसाथी को वैतनिक आय का सुनेहरा अवसर मिलने पर, ऐसे परिवारों के वन अधिकारों को नकारना वन अधिकार अधिनियम की भावना के विरोधाभासी हो सकता है। यदि कोई दावेदार वन अधिकार अधिनियम के पात्रता मानदंड को पूरा करने में सक्षम हैं, तो ऐसे वन अधिकारों की मान्यता पर कोई संवैधानिक रोक नहीं है।

न ही वन अधिकार अधिनियम 'परिवार' के लिए वन अधिकारों की मान्यता को प्रतिबंधित करता है। एक दावेदार एक व्यक्ति, एक परिवार, एक समुदाय अथवा एक ग्राम सभा हो सकती है। इसलिए, परिवार का एक सदस्य वननिवासी के रूप में पात्र न होने का मतलब यह नहीं है कि पात्रता मानदंड को पूरा करने वाले अन्य सदस्य अपने अधिकारों के लिए दावा नहीं कर सकते हैं।

चरवाह/घुमंतू समुदायों जो राजस्व भूमि में निवास कर रहे हों और वनों में ''प्राथमिक रूप से निवास'' नहीं कर रहे हो उनके चरागाह अधिकारों की वन अधिकार अधिनियम के तहत क्या स्थिति रहेगी ?

अगर जिस भूमि पर चरागाह अधिकारों की मांग की गई है वह वन भूमि है तो केवल राजस्व भूमि में निवास करना वन अधिकार अधिनियम के तहत पात्रता के लिए अयोग्यता नहीं है । वन भूमि को वन अधिकार अधिनियम की धारा 2(घ) के तहत विस्तृत रूप से परिभाषित किया गया है।

इसके अलावा, धारा 3(1)(घ) के तहत चरवाह/घुमंतू समुदायों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए विशेष

प्रावधान है जो निम्नलिखित वन अधिकार का वर्णन करता है :

"(घ) अन्य सामुदायिक अधिकारों का प्रयोग अथवा पात्रता जैसेः घुमंतू अथवा चरवाह समुदायों की चरागाह (अधिवासित अथवा यायानान्तरण दोनों) और परंपरागत मौसमी संसाधनों तक पहुंच"।

हिमालयी क्षेत्र में अधिकांश चरवाह समुदाय अर्ध घुमंतू हैं जिसका अर्थ है कि वे राजस्व भूमि में गांव में स्थायी रूप से निवास करते हैं जहां वे कृषीय कार्य-कलापों में भी संलग्न हो सकते हैं और मौसमी घुमंतू चरवाह कार्य-कलापों में संलग्न हो सकते हैं जो परंपरागत प्रकृतिकी है। वन अधिकार अधिनियम वर्गीकृत रूप से ऐसे समुदायों और उनके परंपरागत रीति-रिवाजी चरवाह कार्यों का समावेशक विचार करता है।

चरवाह समुदायों को उनके दावे दाखिल करने के लिए कौन सी ग्राम सभा/ग्राम सभाओं की आवश्यकता होती है ?

दावे चरवाह समुदायों के निजी ग्राम सभाओं के समक्ष दाखिल किए जा सकते हैं। यदि अधिकारों के प्रयोग के लिए एक से अधिक गांवों को पार करना पड़ता है तो दावोंको सभी ग्राम सभाओं के समक्ष भी दाखिल करना चाहिए जहांवे परंपरागत रूप से अस्थायी चरागाह के लिए पारित होने का अधिकार रखते हैं। परंपरागत सामुदायिक संस्थानों के माध्यम से अथवा व्यक्तिगत सदस्यों के माध्यम से यह एक समुदाय के रूप में भी किया जा सकता है। परिणामस्वरूप, वन अधिकार नियमावली के नियम 12(1)(ग) के अनुसार वन अधिकार समिति को जब ऐसे व्यक्ति, समुदाय अथवा उनके प्रतिनिधि उपस्थित हों तभी चरवाहों और घुमंतू जनजातियों द्वारा उनके अधिकारों के निर्धारण के लिए दावों का सत्यापन सुनिश्चित करना है, इन अधिकारों पर निर्णय उनकी अनुपस्थिति में नहीं लिया जाना चाहिए। क्योंकि घुमंतू समुदाय एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए विवश होते हैं और निर्धारित समय सीमा के भीतर ऐसे दावों को दाखिल करने की जरूरत से अनभिज्ञ हो सकते हैं। वन अधिकार समिति को ऐसे दावों को विलम्ब के आधार पर अस्वीकार नहीं करना चाहिए। यह भी संभव है कि घुमंतू चरवाहों के दावे, उस गांव के निवासियों द्वारा बाद में दाखिल किए जा सकते हैं।

विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह

विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों (पी.वी.टी.जी.) के वन अधिकारों के संदर्भ में 'पर्यावास' का अर्थ क्या है ?

वन अधिकार अधिनियम धारा 2(ज) के तहत 'पर्यावास' की परिभाषा निर्धारित करता है और इसके आगे धारा 3(1)(ड.) के तहत ऐसे पर्यावास के लिए वन अधिकार वर्णन करता है। तथापि, वन अधिकार अधिनियम का हिंदी रूपांतरण 'हैबिटेट' का अनुवाद करते समय 'आवास' शब्द का प्रयोग किया गया था है जो कि सामान्य रूप से मकान अथवा आवास के अर्थ के लिए है। इसने बहुत सारे भ्रम पैदा कर दिए है क्योंकि बहुत-से राज्य गलत ढंग से 'हैबिटेट' शब्द को प्रधानमंत्री आवास योजना जैसी स्कीमों के तहत आवास सुविधाएं मुहैया कराने के अर्थों में प्रयोग करते हैं।

भ्रम को दूर करने के लिए, जनजातीय कार्य मंत्रालय ने दिनांक 23.04.2015 को सं. 23011/16/2015-एफ.आर.ए.द्वारा स्पष्टीकरण जारी किया था जिसमें कहा गया था कि ऐसी

व्याख्या गलत है। विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों द्वारा प्रयुक्त क्षेत्र पर सामुदायिक अवधि के लिए अधिकार में केवल आवास या आवासन ही शामिल नहीं है बल्कि सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, पवित्रता, धार्मिक और अन्य उद्देश्य भी शामिल हैं।

क्या वन अधिकार अधिनियम के तहत पी.वी.टी.जी. के अधिवास अधिकारों में राजस्व भूमि शामिल की जा सकती है ?

इस अधिनियम की धारा 2(घ) के तहत यथा परिभाषित ''वन भूमि'' पर वन निवासी अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य परंपरागत वन निवासियों के वन अधिकारों की मान्यता की परिकल्पना वन अधिकार अधिनियम में की गई है। यह बात नोट करने योग्य है कि वन अधिकार अधिनियम द्वारा अपनाई गई ''वन भूमि'' की परिभाषा[7] अपने विस्तृत संभव अर्थ में गोदावर्मन मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुरुप है। इसलिए अवर्गीकृत वन, असीमांकित वन, विद्यमान अथवा मानद वन भी जो प्रायः राजस्व भूमि पर हैं, वन अधिकार अधिनियम के तहत वन भूमि हैं।

इसके परिणामस्वरुप यह संभव है कि वन भूमि जिसमें पी.वी.टी.जी. के अधिवास शामिल हैं दोनों अधिसूचित वनों (जो सरकारी रिकार्ड में हैं) तथा शब्दकोश के अर्थ वाले वनों में (जो राजस्व भूमियों अथवा भूमि की अन्य श्रेणियों पर हो सकते हैं) में फेले हो सकते हैं। इसलिए पी.वी.टी.जी. के अधिवास अधिकार, रिकार्ड किए वनों और उन वनों जो ऐसी राजस्व भूमियों (राजस्व विभाग के प्रशासनिक नियंत्रण के तहत भूमि) पर एफ.आर.ए. के तहत वन भूमि की परिभाषा के अंदर आते हैं, दोनों पर लागू है।

यदि पी.वी.टी.जी. का पर्यावास क्षेत्र (अथवा इसका भाग) वन भूमि (अपने विस्तृत अर्थ में) की परिभाषा के अंदर नहीं आता है तो ऐसे अधिवास अधिकारों को एफ.आर.ए. के तहत मान्यता नहीं दी जा सकती है। तथापि, इसे संबंधित राज्य सरकार के संबंधित राजस्व कानूनों के तहत अथवा पेसा के संगत प्रावधानों के अंतर्गत मान्यता दी जा सकती है।

विशेष रुप से एक से अधिक ग्राम सभा को सम्मिलित करते हुए पर्यावास के परिप्रेक्ष्य में पी.वी.टी.जी. समूहों के अधिकारों तथा अधिवास अधिकारों पर दावों को कैसे सुसाध्य बनाया जाएगा ?

वन अधिकार अधिनियम की धारा 2(ज) के तहत ''पर्यावास'' की स्पष्ट रुप से परिभाषा करता है तथा धारा 3(1)(ड.) के तहत ऐसे पर्यावास के लिए वन अधिकार को पुनः परिभाषित किया गया है। वन अधिकार नियमावली का नियम 12(1)(घ) वन अधिकार समिति से यह सुनिश्चित करने की पुनः अपेक्षा करता है कि पी.वी.टी.जी. के दावों को तब सत्यापित किया जाए जब ऐसे समुदाय अथवा उनके प्रतिनिधि मौजूद हों।

इसके अलावा, समुदाय के अधिवास और पर्यावास की अवधि का अधिकार को अधिवास, आजीविका, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक तथा अन्य उद्देश्यों के लिए पी.वी.टी.जी. द्वारा प्रयुक्त

[7] पूर्व टिप्पण 3

परंपरागत क्षेत्र पर मान्यता दी जा सकती है। कुछ मामलों में पी.वी.टी.जी. के अधिवास अन्य लोगों/समुदायों के वन तथा अन्य अधिकारों के साथ अतिछादित हो सकते हैं।

वन अधिकार नियमावली (06.09.2012 को यथा संशोधित) के नियम 8 के तहत यह सुनिश्चित करने के लिए जिला स्तरीय समिति (डी.एल.सी.) की भूमिका की परिकल्पना की गई है कि पी.वी.टी.जी. तथा अन्य कमजोर समुदायों के ऐसे अधिकारों को वन अधिकार अधिनियम के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए तैयार किया जाता है।

इसके अलावा, यह प्रावधान भी किया गया है कि पी.वी.टी.जी. की विशिष्ट अतिसंवेदनशीलता के कारण डी.एल.सी. उनके परंपरागत संस्थानों के परामर्श से पी.वी.टी.जी. के अधिकारों की मान्यता की प्रक्रिया शुरु करते हुए सक्रिय भूमिका निभाए तथा यह सुनिश्चित करे कि पर्यावास अधिकारों के लिए उनके दावे संबंधित ग्राम सभा के समक्ष दायर किए जाएं। इस उद्देश्य के लिए जब भी आवश्यक हो उनकी ग्राम सभाओं की अस्थायी प्रकृति ध्यान में रखी जाए। जनजातीय कार्य मंत्रालय के दिनांक 23.04.2015 के परिपत्र सं. 23011/16/2015–एफ.आर.ए. के माध्यम से इसे दोहराया भी गया है।

जहां पी.वी.टी.जी. के दावे पहले ही दायर किए गए हैं वहां डी.एल.सी. प्रत्येक दावा किये हुए क्षेत्र के नक्शे के साथ, उन अधिकारों की मान्यता को सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाए।

लघु वन उत्पाद

कुछ राज्यों/क्षेत्रों में लघु वन उत्पाद के अधिकार भारतीय वन अधिनियम के तहत 'वन व्यवस्थापन' के अंतर्गत पहले ही प्रदान किए गए हैं। क्या, ऐसे राज्यों/क्षेत्रों में वन अधिकार अधिनियम के तहत एम. एफ.पी.के लिए सामुदायिक अधिकार संगत हैं ?

कुछ राज्यों में 20वीं सदी की शुरुआत में वन व्यवस्थापन किया गया था। तब से 100 वर्ष से अधिक बीत गए हैं और इन एम.एफ.पी. तक पहुंच की प्रकृति और व्यक्ति में बहुत परिवर्तन हो गया है। भूमि पर प्राथमिकता और दबाव के अनुसार भूमि के उपयोग भी बदल गए हैं। इसके अलावा, जहां ये अधिकार सरकारी रिकार्डों में दर्ज हो रहे हैं वहीं अधिकार–पत्रों से संबंधित दस्तावेज इन अधिकारों का उपयोग करने वाले लोगों के पास उपलब्ध नहीं हैं। अन्य राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में वन व्यवस्थापन अपूर्ण हैं। इससे अनिश्चितता और असुरक्षा होती है।

वन अधिकार अधिनियम धारा 3(1), (ख), (ग), (घ), (छ) के तहत पूर्व विद्यमान वन अधिकारों की मान्यता का प्रावधान है। विशेष रुप में धारा 3 (1), (ञ) तथा (ठ) में किसी राज्य कानून और परंपरागत रुप में प्रयुक्त परंपरागत अधिकारों के तहत मान्यता प्राप्त वन अधिकारों की मान्यता का प्रावधान किया गया है। अंततः, धारा 3(1)(झ) के तहत ग्राम सभाओं को अपने सी.एफ.आर. की सुरक्षा, पुनः सृजन, संरक्षण तथा प्रबंधन का अधिकार दिया गया है।

वन अधिकार अधिनियम तथा वन अधिकार नियमावली के तहत प्रक्रिया के अनुरुप इन अधिकारों को मान्यता प्राप्त हो जाने पर सी.एफ.आर. में वनों, वन्य जीवन, जल संसाधनों तथा अन्य प्राकृतिक

संसाधनों की सुरक्षा और संरक्षण के उद्देश्य के लिए नियम 4(1)(ड.) के तहत समितियों की स्थापना सहित कई अधिकार और परिणामी बाध्यताएं होंगी। दूसरी ओर आई.एफ.ए. के तहत 'वन व्यवस्थापन' में जब एम.एफ.पी. के अधिकार की प्रकृति तथा सीमा का विशेष रूप से उल्लेख है, यह जरूरी नहीं कि वन निवासियों को एफ.आर.ए. के तहत प्रदत्त अन्य सहगामी अधिकार, उत्तरदायित्व तथा अधिकार भी प्रदान किये गये हैं ?

कानून की यह समान स्थिति अन्य राज्यों में भी लागू है जहां राज्य के किसी कानून के तहत पूर्ववर्ती अधिकार विद्यमान हैं अथवा राज्य में किसी परंपरागत या रीति रिवाज वाले कानून के अंतर्गत इन्हें मान्यता दी गई है। उदाहरण के लिए, झारखंड में छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम, 1908 तथा संथाल–परगना काश्तकारी अधिनियम, 1949 कई अधिकारों, जिन्हें एफ.आर.ए. के तहत भी निरुपित किया गया है, को मान्यता प्रदान की गई हैं। राज्य, जिनके क्षेत्र संविधान की छठी अनुसूची के अंतर्गत आते हैं वहां स्वायत्त जिला परिषदों द्वारा अधिनियमित विशेष कानून हैं जो वन भूमि में सामुदायिक अधिकारों को मान्यता देते हैं। इन अधिकारों को एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकारों की परिभाषा में शामिल किया गया है।

वन अधिकार अधिनियम की धारा 3(1)(ग) वन निवासी अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य परंपरागत वन निवासियों को लघु वन उत्पादों (एम.एफ.पी.) पर स्वामित्व का अधिकार प्रदान करती है। क्या बांस तथा अन्य राष्ट्रीयकृत वन उत्पाद पर स्वामित्व जोराज्य वन कानूनों के अंतर्गत आते है, पर अधिकार वन अधिकार अधिनियम के तहत सौंपे जा सकते हैं ?

जी हां,दावा किए गए बांस तथा अन्य राष्ट्रीयकृत वन उत्पाद सहित सभी लघु वन उत्पादों (एम.एफ.पी.) पर स्वामित्व के अधिकार वन निवासी अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य परंपरागत वन निवासियों को प्रदान किये जाने हैं।

वन अधिकार अधिनियम की धारा 2(झ) वाक्यांश ''लघु वन उत्पाद'' जिसमें बांस, तेंदु अथवा केंदू पत्ते आदि सहित पौधे के मूल की सभी गैर–इमारती लकड़ी संबंधी वन उत्पाद शामिल हैं, को स्पष्ट रुप में परिभाषित करती है। तदनुसार, इस अधिनियम में यथापरिभाषित सभी एम.एफ.पी. के स्वामित्व, एकत्र करने, उपयोग करने तथा निपटान तक पहुंच के अधिकार को मान्यता दी जानी है तथा इन्हें इस अधिनियम (अधिनियम की धारा 3(1)(ग) देखें) के तहत वन निवासी अनुसूचित जनजातियों (एफ.डी. एस.टी.) तथा अन्य परंपरागत वन निवासी (ओ.टी.एफ.डी.) को प्रदान किया जाना है।

क्या के अधिकार व्यक्तियों अथवा व्यक्तियों के समूहों या केवल ग्राम सभा को दिए जा सकते हैं ?

यह एक सामान्य भ्रांति है कि धारा 3(1)(क) के तहत वन अधिकार केवल व्यक्तियों को ही दिए जा सकते हैं तथा धारा 3(1)(ख) से (ड) के तहत शेष अधिकार केवल ग्राम सभा को ही दिए जा सकते हैं। वन अधिकार अधिनियम की धारा 3(1) स्पष्ट रुप से बताती है कि सूचीबद्ध सभी वन अधिकार ''व्यक्तिगत अथवा सामुदायिक स्वामित्व या दोनों को सुरक्षित करते हैं''। अतः इस प्रकार अधिकार प्रदान किया जाना, यदि स्वयं अधिकार की प्रकृति के विपरीत नहीं है (जैसे की धारा 3(1)(ध) की तहत दिए गए अधिकार) तो, ग्राम सभा में एम.एफ.पी. के लिए वन अधिकारों सहित, धारा 3(1) के तहत अधिकार

किसीभीव्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह, या उपयोगकर्त्ता समूह को दिए जाने हेतु, कानून में कोई बाधा नहीं है।

क्या ग्राम सभा पारगमन परमिट जारी कर सकती है तथा विद्यमान पारगमन नियमों का क्या होगा ?

जी हां, जहां वन अधिकार अधिनियम के तहत अधिकारों को मान्यता दी गई है वहां ग्राम सभा के पास लघु वन उत्पाद के लिए पारगमन परमिट नियमित करने का प्राधिकार है।

वन अधिकार नियमावली (दिनांक 06.09.2012 को यथा संशोधित) में प्रावधान है कि लघु वन उत्पाद के परिवहन के लिए पारगमन परमिट नियम 4(1)(ड.) के तहत ग्राम सभा द्वारा गठित समिति अथवा ग्राम सभा द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा जारी किए जाएंगे। नियमावली में आगे प्रावधान हैं कि पारगमन परमिट के मुद्दे से संबंधित इस समिति के सभी निर्णय ग्राम सभा के समक्ष अनुमोदन के लिए रखे जाएंगे।

तदनुसार, राज्य स्तर पर विद्यमान पारगमन परमिट के नियम अधिकारधारियों के संबंध में लघु वन उत्पाद के परिवहन के संबंध में वन अधिकार अधिनियम के तहत आशोधित किए जा सकते हैं तथा इन्हें वन अधिकार अधिनियम के प्रावधानों के साथ श्रेणीबद्ध किया जा सकता है।

पेसा तथा वन अधिकार अधिनियम दोनों में लघु वन उत्पाद के स्वामित्व से संबंधित प्रावधान हैं। क्या इन दोनों में कोई विरोधाभास है ?

पेसा और वन अधिकार अधिनियम संबंधित विधान हैं तथा इसके अर्थ को बारीकी से समझना जरुरी है। एफ.आर.ए. तथा पेसा दोनों का अर्थ निकटतम लगाया जाता है और क्योंकि एफ.आर.ए. की धारा 3(1)(ग) के तहत एम.एफ.पी. का स्वामित्व पहले से ही वन निवासी समुदायों को दिया गया है, अतः इसमे कोई विरोधाभास नहीं है।

पेसा तथा एफ.आर.ए. के बीच जो विरोधाभास प्रतित होता है, वह राज्य स्तर के विधानों के बीच विरोधाभास होने का परिणाम है जो आवश्यक रुप में मूल विधान के अनुरुप नहीं है। पेसा के अनुसार, लघु वन उत्पाद का स्वामित्व उपयुक्त स्तर पर ग्राम सभा और पंचायतों को दिया जाता है (संभवतया जहां संसाधन एक से अधिक ग्राम सभाओं के लिए हैं)। तथापि, कुछ राज्यों में ग्राम सभा की उपेक्षा करते हुए स्वामित्व ग्राम पंचायत को दिया गया है जो पेसा कि भावना के विरुद्ध है, तथा इसे ठीक किए जाने की आवश्यकता है। यदि ऐसी भ्रांति को हटाया जाता है तो एफ.आर.ए. के साथ इसका संबंध और अधिक स्पष्ट हो जाएगा।

पेसा का अनुप्रयोग 5वीं अनुसूची के क्षेत्रों तक सीमित है। अतः यह केवल अनुसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभाओं को का स्वामित्व देता है। वन निवासियों को एक बड़ी जनसंख्या अनुसूचित क्षेत्रों के बाहर भी रहती है जिन्हें भूतकाल में ऐसे लाभ नहीं प्राप्त हो सकते थे। तथापि, अब सभी वन निवासी जनसंख्या चाहे वह अनुसूचित क्षेत्र के अंदर हो अथवा बाहर, उन्हें वन अधिकार अधिनियम के तहत शामिल किया गया है। इसके अलावा, पेसा में अधिकारधारियों को राज्य प्रशासन द्वारा लिखित अधिकार–पत्र दिए जाने की आवश्यकता नहीं है जिसकी आवश्यकता एफ.आर.ए. में अपेक्षित है।

पेसा के तहत ग्राम सभा को तथा एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकार धारकों को भी एम.एफ.पी.का स्वामित्व कैसे दिया जा सकता है ?

एफ.आर.ए. की धारणा एक व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह या परिवार को अधिकार देने की है जहां ग्राम सभा पूर्ण रूपेण उत्तरदायी है। वैयक्तिक अधिकार ग्राम सभा के अधिकार में निहित हैं। अतः एफ. आर.ए. के तहत एम.एफ.पी. के स्वामित्व के अधिकार की तुलना भी निजी संपत्ति के अधिकार से नहीं की जा सकती है और वास्तव में, एम.एफ.पी. के निपटान पर अवरोध प्रस्तावना व्यक्त की गई धारणा वन परिस्थितिकीयता तथा पारीस्थितिकीय निरंतरता के परिणाम स्वरुप है। संपत्ति तथा स्वामित्व की धारणा पेसा में प्रतिबिंबित की गई है।

वन अधिकार अधिनियम की धारा 5 तथा वन अधिकार नियमावली के नियम 4(1) के तहत निर्णयों तथा योजनाओं को ग्राम सभा स्तर पर चर्चा, चिंतन तथा तोलमोल की प्रक्रिया से मिलाया जाना चाहिए। जब की यह लंबी प्रक्रिया के रुप में प्रतीत होते है, ऐसे निर्णय वन निवासी समुदायों के द्वारा लिए जाने का केवल यही एक उपाय है जो उनकि दीर्घावधि सफलता के अवसरों में तेजी से वृद्धि कर सकते है।

नियम 4(1)(ड.) के तहत ग्राम सभा और समिति के बीच निर्णय लेने की शक्ति किसे प्राप्त है ?

एम.एफ.पी. के संबंध में निर्णय लेने की शक्ति स्पष्ट रुप में ग्राम सभा के पास रहती है तथा वन अधिकार नियमावली की धारा 4(1)(ड.) के तहत गठित समिति इसकी प्रतिनिधि या कार्यकारी अंग है। समिति की कार्रवाईयां ग्राम सभा के अनुमोदन, अशोधन अथवा निरसन के अध्याधीन होती हैं।

लघु वन उत्पाद की नीलामी और/अथवा विक्रय कौन कर सकता है– वन अधिकार धारक अथवा नियम 4(1)(ड.) के तहत बनी समिति ?

सभी लघु वन उत्पादों की नीलामी नहीं की जाती है। एम.एफ.पी. के निरसन का अधिकार, नियम 2(1)(घ) के तहत यथा परिभाषित कार्यकलापों के संपूर्ण विस्तार में शामिल है जो वन अधिकार अधिनियम की धारा 5 के तहत ग्राम सभा की शक्तियों के अध्याधीन होगा ?

जहां के अधिकार व्यक्ति, व्यक्तियों के समूह अथवा परिवार को प्रदत्त है, ऐसे एम.एफ.पी. का विक्रय नियम 2(1)(घ) के तहत यथा परिभाषित कार्यकलापों के संपूर्ण विस्तार में शामिल है परन्तु यह इस अधिनियम की धारा 5 के तहत ग्राम सभा की शक्तियों के अध्याधीन होगा।

जहां समुदाय में किसी व्यक्ति या परिवार द्वारा एकत्रित/उपयोग न की गई एम.एफ.पी. का एक मात्र स्वामी ग्राम सभा है वहां एम.एफ.पी. की निलामी तथा विक्रय ग्राम सभा के अधिकार तथा शासन–क्षेत्र के अध्याधीन आता है ? ग्राम सभा या तो स्वयं इस प्रक्रिया को करेगी या फिर इस कार्य को करने के लिए नियम 4(1)(ड.) के तहत समिति को प्राधिकृत करेगी, परंतु यदि वह ऐसा करती हैं तो ऐसी स्थिति में समिति, ग्राम सभा के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करेगी, न कि अधिकारों का उपयोग स्वयं करेगी ? इसके अतरिक्त, समिति के सभी निर्णय ग्राम सभा की मंजूरी के अध्याधीन होंगे ?

एफ.आर.ए. का एक महत्वपूर्ण मौलिक सिद्धांत वन निवासी समुदायों की आजीविका तथा खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए इसका सतत उपयोग करना है ? यह स्थानीय जरूरतों की कीमत पर एम.एफ.पी.

के व्यावसायिक उपयोग संबंधी रूपांतरण को रोकता है और यह भी सुनिश्चित करता है कि स्थानीय कलाकारों, जो एम.एफ.पी. की कच्चे माल के रूप में उपयोग करते है, के अधिकारों की रक्षा की गई है ?

एम.एफ.पी.के विक्रय का अधिकार वन अधिकार धारकों के पास होने की स्थिति में क्या वे किसी भी व्यक्ति को बेच सकते हैं, या फिर वे इसे ग्राम सभा या ग्राम सभा द्वारा तय एजेंसी को बेचने के लिए मजबूर हैं ?

प्रभावी रूप से अधिकार पर ऐसे किसी प्रकार का प्रतिबंध इस आश्य तक नहीं हो सकता कि इसे केवल ग्राम सभा तथा इसके एजेंट को बेचा जाना चाहिए (धारा 3(1)(ग) नियम 2(1)(घ) देखें)। एम.एफ.पी. के अधिकार की ऐसी कोई व्याख्या गलत होगी और जो कम मूल्य वाले एम.एफ.पी. पर अपनी आजीविका तथा इसके उपयोग पर निर्भर करते हैं उन वन निवासियों के लिए विशेष रूप के आर्थिक तंगी पैदा करेगी। विशेष रूप से जहां मूल्यवृद्धि, जो कि अक्सर खतरनाक परिस्थितियों में किये जाते हैं, श्रमिकों के एकत्रिकरण एवं निष्कर्षण का परिणाम है ।

जैसा कि पहले कहा गया है, जहां एम.एफ.पी. का मालिक कोई व्यक्ति, व्यक्तियों का समूह, या परिवार है तो वे धारा 5 के तहत ग्राम सभा तथा नियम 4(1)(ड.) के तहत समिति के एम.एफ.पी. के विक्रय तथा बिक्री के निर्णय, जो कि संसाधनों की स्थिरता को प्रभावित करता है उनका अनुपालन अपेक्षित है ? ऐसे प्रतिबंधों के अलावा, विक्रय के अधिकार को कम नहीं किया जा सकता ?

ऐसी परिस्थिति में जहां दावाकर्ता अन्य परंपरागत वन निवासी अथवा वन निवासी अनुसूचित जनजाति के रूप में पात्र नहीं होते हैं, और इसलिए एफ.आर.ए. के तहत एम.एफ.पी.के अधिकार हेतु दावे के अपात्र हैं, तो क्या दो प्रकार के नियम तैयार करने की आवश्यकता होगी – एक अपात्र व्यक्तियों के लिए और दूसरा ऐसे व्यक्तियों के लिए जिनके (बांस सहित) के अधिकारों को मान्यता दी गई है ?

एफ.आर.ए. के तहत 'स्वामित्व' का भाव निजी संपत्ति के अधिकार की मौजूदा समझ की संरचना के तहत नहीं है, जहां स्वामित्व का तात्पर्य विषयगत संपत्ति के उपयोग तथा निपटान के पूर्ण अधिकार से है ? एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकार सहभागिता तथा लोकतांत्रिक निर्णय लेने की संरचना के तहत आता है जो समग्र तथा बृहद वन पारिस्थितिकी तंत्र के साथ एकीकृत है ?

इसलिए एफ.आर.ए. के तहत एम.एफ.पी. के स्वामित्व के अधिकार की भी निजी संपत्ति से तुलना नहीं की जा सकती और इसके परिणामस्वरूप इसके विक्रय से संबद्ध बाधाऐं, वास्तव में प्रस्तावना में उल्लिखित वन पारिस्थितिकी तंत्र एवं स्थिरता के भाव का एक भाग है ? संपत्ति तथा स्वामित्व का यह भाव पेसा में भी प्रतिबिम्बित है ?

इस संदर्भ में यह उल्लेख किया जाना चाहिए कि ऐसी परिस्थितियां हो सकती है जिसमें कोई विशेष एम. एफ.पी. अधिकार का वन अधिकारधारक कोई व्यक्ति, व्यक्तियों का समूह अथवा कोई परिवार होगा द्य ऐसे अधिकार ग्राम सभा के समग्र अधिकारों, शक्तियों तथा उत्तरदायित्वों के अंतर्गत निहित हैं द्य

कुछ निम्नलिखित निदर्शी उदाहरण हैं:–

- किसी विशेष पेड़ या वृक्षों से फूल, फल या पत्ते की कटाई का अधिकार, जो किसी विशेष व्यक्ति या परिवार को प्रदान किया गया है;
- निश्चत क्षेत्रों में उप–समूहों द्वारा निश्चित एम.एफ.पी. के एकत्रण के वियोजन, बिक्री तथा परिवहन का अधिकार;

- जहां एम.एफ.पी. में मूल्य वृद्धि केवल इसके निष्कर्षन के दौरान लगाए गए वैयक्तिक श्रम से होती है, जिसके न होने पे उपज कम हो जाएगी (यह उच्च मूल्य के साथ–साथ कम मूल्य वाले एम.एफ.पी. दोनों की स्थितियों में सही है);
- किसी एम.एफ.पी. के संग्रहकर्ता मौसम दर मौसम अलग होते हैं अथवा जहां विभिन्न एम. एफ.पी. केवल किसी विशेष समुदाय द्वारा एकत्रित किया जाता है; और इत्यादि

ऐसी परिस्थितियों में वन अधिकार अधिनियम के साथ–साथ वन अधिकार नियमावली स्पष्ट रूप से व्यक्ति/व्यक्तियों के समूह/परिवार को उनके श्रम तथा मूल्य वृद्धि के लिए उचित प्रतिफल प्राप्त करने के अधिकारों को मान्यता देता है और ग्राम सभा की शक्तियों, उत्तरदायित्व तथा अधिकारों के साथ इसका सामंजस्य स्थापित किया गया है। इसलिए, एफ.आर.ए. की धारा 5 के तहत सतत उपयोग के लिए वन संसाधनों को संरक्षित, प्रबंधित तथा रक्षित करने का ग्राम सभा का अधिकार, व्यक्ति/व्यक्तियों के समूह/परिवार के स्वामित्व के अधिकार के साथ सहवर्ती होता है। अधिनियम द्वारा निर्धारित मानदंडों के अनुसार इसके सतत उपयोग के लिए एकत्रण अधिकारों तथा उत्तरदायित्व को विनियमित करने का अधिकार ग्राम सभा के पास है और वैयक्तिक अधिकार ग्राम सभा के ऐसे 'स्वामित्व' के अंतर्गत निहित है। तदनुसार, एम.एफ.पी. पर स्वामित्व के अधिकार उपयोग हेतु, धारा 5 तथा नियम 4(1)(ड.) के तहत प्रदत्त शक्तियों के उपयोग में ग्राम सभा द्वारा तैयार किए गए नियमों के पालन के लिए केवल एक ही नियमावली होनी चाहिए।

वन ग्रामों तथा असर्वेक्षित ग्रामों का राजस्व ग्राम में परिवर्तन

कैसे पुराने आवास, अलिखित अथवा असर्वेक्षित बस्तियों तथा वन भूमि पर अन्य ग्रामों, जो किसी राजस्व अथवा वन अभिलेख का भाग नहीं हैं, को राजस्व गांव में परिवर्तित किया जा सकता है ?

वन अधिकार नियमावली (06.09.2012 को यथा संशोधित) के नियम 2(क) के अनुसार एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन को अक्षरशः सुनिश्चित करने के उद्देश्य से, यह आवश्यक है कि कलेक्टर के नेतृत्व में तथा पंचायतीराज संस्थानों के सहयोग से जिला प्रशासन, सभी वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को राजस्व ग्राम के रूप में परिवर्तन के लिए प्रारंभिक रूप से चिह्नित किया गया है, यह सुनिश्चित करने के लिए सक्रिय कदम उठाए।

पर्यावासों या अधिवासों, अलिखित या असर्वेक्षित विस्थापनों अथवा वन ग्रामों या टौंगिया ग्रामों के चिह्नन की प्रक्रिया तथा वन अधिकार अधिनियम के प्रयोजन के लिए ग्राम के रूप में उनके समावेशन को वन अधिकार नियमावली के नियम 2(क) में उल्लेखित किया गया है। आगे, नियम 2 क(ग) ये प्रावधान करता है कि बस्तियों तथा पर्यावासों की सूची को अंतिम रूप देने पर इन बस्तियों तथा पर्यावासों के अधिकारों की मान्यता एवं प्रदान प्रक्रियाकिसी पूर्वमान्य अधिकारों को प्रभावित किए बिना की जाए ।

एफ.आर.ए. के तहत संदर्भित वन ग्रामों में न केवल वन विभाग के रिकार्ड में अभिलेखित वन ग्राम शामिल हैं, परंतु वनों में स्थित अन्य पुरानी बस्तियां, असर्वेक्षित ग्राम, और अन्य ग्राम भी है, चाहे वह

अभिलेखित, अधिसूचित हैं या नहीं। इसलिए, धारा 3 (1)(ज) के तहत इस महत्वपूर्ण वन अधिकार की मान्यता के लिए ग्रामों का सरकारी रिकार्ड में शामिल होना, आवश्यक पूर्व शर्त नहीं है।

क्या होता है जब भूमि में वन ग्रामों और अन्य ऐसे ग्रामों का परिवर्तन आवश्यक होता है जो वन भूमि के रूप में वर्गीकृत नहीं हैं ?

सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 12.12.1977[8] को गोदावर्मन मामले में दिए गए एक ऐतिहासिक फैसले में निम्नानुसार कहा है:

> ''धारा 2 (वन संरक्षण अधिनियम, 1980) में आने वाला शब्द ''वन भूमि'' जो न केवल शब्दकोश के भाव के अनुसार 'वन' माना जाता है,बल्कि इसमेंऐसा कोई भी क्षेत्र शामिल है, जोस्वामित्व के निरपेक्ष में सरकारी अभिलेख में, वन के रूप में अभिलेखित हो।''

तब से 'वन भूमि' शब्द को इसकी व्यापक परिभाषा में समझा जाए, अर्थात न केवल इस प्रकार वर्गीकृत वन भूमि सहित, अपितु अन्य सभी वन, जिसमें राजस्व वन, निजी वन, सामुदायिक वन और किसी भी अन्य प्रकार की वन भूमियां भी शामिल होंगी।

एफ.आर.ए., माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अनुरूप है, यह भी वन भूमि की परिभाषा को एक व्यापक रूप से अपनाता है। चूंकि एफ.आर.ए. के तहत प्रदत्त अधिकार सभी वन भूमि पर लागू होते हैं, यदि किसी वन में ऐसे ग्राम हैं जो कि वन भूमि के रूप में वर्गीकृत नहीं हैं, उन ग्रामों को भी एफ.आर.ए. के तहत राजस्व ग्रामों के रूप में परिवर्तित किये जाने की आवश्यकता है।

क्या वन अधिकार अधिनियम के प्रावधानों, वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के प्रावधानों और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 13.11.2000 के बीच कोई मतभेद है ?

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 13.11.2000[9] को लंबित जनहित मुकदमे में एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था, जो इस प्रकार है:

''अगले आदेशों के जारी होने तक वनों / अभयारण्यों / राष्ट्रीय उद्यानों का अनारक्षण प्रभावित नहीं होगा"।

यह आदेश वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के प्रावधानों के व्यापक उल्लंघन के संदर्भ में पारित किया गया था । इस आदेश के परिणाम स्वरूप, किसी भी वन भूमि के वर्गीकरण को गैर-वन भूमि में बदलने की आवश्यकता की स्थिति में सर्वोच्च न्यायालय की विशेष अनुमति की आवश्यकता थी।

एफ.आर.ए. की धारा 4 (1), जो वन निवासी अनुसूचित जनजाति तथा अन्य परंपरागत वन निवासी को मान्यता देती है तथा वन अधिकार प्रदान करती है, गैर अनुपालनात्मक चरण (नॉन-ऑब्स्टैंट क्लाज) के साथ शुरू होती है । इसमें कहा गया है कि इस तरह के वन अधिकारों को ''कुछ समय के लिए लागू अन्य किसी कानून में निहितार्थ के बावजूद'' मान्यता दी गई है और प्रदान की गई है, जिसका अर्थ है

[8] पूर्व टिप्पण 1

[9] वर्ष 1995 की रिट याचिका (सी) सं. 337 में आई.ए.सं. 2 में दिनांक 13.11.2000 का आदेश, भारत का सर्वोच्च न्यायालय ? पर्यावर्णीय कानून केन्द्र, डब्ल्यूडब्ल्यूएफ-स बनाम भारत संघ, 2000 एससीएएलई (पीआईएल) 325

कि वन अधिकार इस तरह के वन अधिकार को मान्यता और प्रदायगी इस बात की परवाह किए बिना प्रदान की जाती है कि वे अन्य कानूनों के विपरीत हो सकते हैं या नहीं । दिनांक 31.12.2007 को एफ.आर.ए. के लागू होने के बाद, माननीय सर्वोच्च न्यायालय का दिनांक 13.11.2000[9] का अंतरिम आदेश एफ.आर.ए. के प्रावधानों द्वारा निर्देशित होगा।

एफ.आर.ए. की धारा 4(7) यह प्रावधान करती है कि वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के तहत निकासी, वन भूमि के विपथन के लिए 'निवल वर्तमान मूल्य' और 'प्रतिपूरक वनीकरण' के भुगतान सहित सभी प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं के बिना वन अधिकार प्रदान करता है।

एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकारों की मान्यता के लिए ''वन का अनारक्षण" या वन भूमि को गैर–वन भूमि के रूप में वर्गीकरण संबंधी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है।

इसलिए, धारा 3 (1)(ज) के तहत व्यवस्थापन तथा वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तन सहित सभी वन अधिकारों की मान्यता देना तथा इसे प्रदान करना सर्वोच्च न्यायालय के दिनांक 13.11.2000 के आदेश के उल्लंघन में अथवा विरोधाभासी नहीं है।

क्या वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 की धारा 2 के तहत वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तित करने के लिए अनुमोदन की आवश्यकता है ?

एफ.आर.ए. की धारा 4(7) और ऊपर वर्णित वैधानिक स्थिति के मद्देनजर, वन संरक्षण अधिनियम, 1980 की धारा 2 के तहत वन ग्रामों, पुरानी बस्तियों, असर्वेक्षित ग्रामों तथा वनों में अन्य ग्रामों, चाहे यह अभिलेखित या अधिसूचित हैं या नहीं, को राजस्व ग्रामों में परिवर्तित करने के लिए अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है ।

एफ.आर.ए. के प्रावधानों के अनुसार, अधिनियम की धारा 3(1)(ज) के तहत वन ग्रामों तथा वन में ऐसे अन्य ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तित करने संबंधी अधिकार सहित अधिनियम की धारा 3(1) में विनिर्दिष्ट वन अधिकारों के अभिलेख को अनुमोदित करने के लिए अंतिम प्राधिकार जिला स्तरीय समिति के पास निहित है।

वन ग्रामों के परिवर्तन से उन ग्रामों में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों के अलावा अन्य समुदायों पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

वन ग्रामों के राजस्व ग्रामों में परिवर्तन से किसी भी ग्राम में रहने वाले किसी भी समुदाय पर कोई असर नहीं पड़ेगा, भले ही वे अनुसूचित जनजाति से संबंधित न हों या अन्य परंपरागत वन निवासी के रूप में अपात्र हो। एफ.आर.ए. किसी अन्य अधिनियम, नियम या सरकारी आदेश के तहत मान्यता प्राप्त अधिकारों या विशेषाधिकारों को निरस्त नहीं करता है । वास्तव में, वन ग्रामों का राजस्व ग्रामों में परिवर्तन, सरकार को इन ग्रामों में सभी विकास सुविधाओं का विस्तार करने के लिए सक्षम बनाएगा तथा इन ग्राम के निवासी सरकार के विकास कार्यक्रमों तथा स्कीमों के पात्र लाभार्थी होंगे।

वन ग्रामों का राजस्व ग्रामों में परिवर्तन, जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी दिनांक 08.11.2013 (ज.का.मं.सं / 23011/33/2010 – एफ.आर.ए.) के दिशा–निर्देशों के अनुसार करने

की आवश्यकता है ?

मुख्यतः अन्य परंपरागत वन निवासियों द्वारा विशेष रूप से बसे हुए वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों के मामले में, क्या अन्य परंपरागत वन निवासियोंको यह प्रमाणित करना आवश्यक है के वे उक्त ग्राम में दिनांक 13.12.2005 से पूर्व 75 वर्षों से बसे हुए हैं ?

एफ.आर.ए. की धारा 2 (ण) के साथ पठित धारा 4 (1)(ख) में ये अपेक्षित है कि अधिनियम के तहत वन अधिकारों की मान्यता के लिए अन्य परंपरागत वन निवासी के किसी **"सदस्य या समुदाय"** को यह प्रमाणित करना चाहिए कि वे दिनांक 13.12.2005 से पूर्व कम से कम 3 पीढ़ियों (75 वर्षों) से **"वहां मुख्य रूप से निवास कर रहे हैं या वास्तविक रूप से आजीविका की आवश्यकताओं के लिए वन अथवा वन भूमि पर निर्भर हैं"** । इस प्रश्न का उत्तर जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा दिनांक 09.06.2006 के उनके परिपत्र फा. सं.17014/02/2007–पीसीएण्डवी (खंड VII) में विस्तारित रूप से दिया गया है ।

वन अधिकारों को मान्यता तथा प्रदायगी के उद्देश्य से अन्य परंपरागत वन निवासियों के किसी व्यक्ति या समुदाय का, 75 वर्षों के लिए वन में विशेष रूप से किसी विशिष्ठ तथा पहचान योग्य स्थान पर रहना एफ.आर.ए. के तहत आवश्यक नहीं है। जब तक वे यह स्थापित करने के लिए सक्षम होंगे कि वे दिनांक 13.12.2005 से पूर्व 75 वर्षों से वनों या वन भूमि पर वास्तविक आजीविका आवश्यकताओं के लिए मुख्य रूप से निवास कर रहे हैं तथा निर्भर हैं तब तक अधिनियम के तहत वन अधिकारों की मान्यता तथा उसे प्रदान करने के लिए उन्हें पात्र माना जाएगा। यह वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तन के वन अधिकार सहित सभी वन अधिकारों पर समान रूप से लागू है। वास्तव में, किसी वन ग्राम में निवास, स्वयं ही अन्य परंपरागत वन निवासी होने की स्थिति का साक्ष्य है।

क्या एफ.आर.ए., में वन्यजीव अभयारण्यों तथा राष्ट्रीय उद्यानों के अंदर स्थित वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को भी धारा 3 (1)(ज) के तहत राजस्व ग्रामों में परिवर्तित करने का प्रावधान है ?

एफ.आर.ए., में वन्यजीव अभयारण्यों और राष्ट्रीय उद्यानों सहित सभी वन भूमियों पर वन निवासी अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य परंपरागत वन निवासियों के लिए वन अधिकारों की मान्यता देने तथा इनकी प्रदायगी की परिकल्पना की गई है ?

इसलिए, अधिनियम की धारा 3 (1)(ज) के तहत वन्यजीव अभयारण्यों तथा राष्ट्रीय उद्यानों में स्थित वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तित किया जाना आवश्यक है।

क्या वन निवासी अनुसूचित जनजाति तथा अन्य परंपरागत वन निवासियों को वन अधिकारों की मान्यता देने तथा इसे प्रदान करने की प्रक्रिया को, वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को राजस्व ग्रामों में लंबित परिवर्तन के पहले आरंभ/जारी की सकती है ?

एफ.आर.ए. के तहत, अधिनियम की धारा 3 (1)(ज) के तहत वन निवासी अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य परंपरागत वन निवासियों, जो ऐसे ग्रामों में रहते हैं, को वन अधिकार की मान्यता देने तथा इसे प्रदान करने के लिए वन ग्रामों तथा ऐसे अन्य ग्रामों का राजस्व ग्रामों में परिवर्तन पूर्व शर्त नहीं है ।

इसलिए, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य परंपरागत वन निवासियों को वन अधिकारों को मान्यता देने तथा इसे प्रदान करने की प्रक्रिया को, वन ग्रामों तथा अन्य ऐसे ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तन की प्रतीक्षा किए बिना आरंभ किया जा सकता/जारी रखा जा सकता है ।

अधिकार पत्र और अधिकारों का रिकार्ड

एफ.आर.ए. के तहत दिए गए अधिकार पत्र की श्रेणी क्या है ?

एफ.आर.ए. के तहत दिया गया अधिकार पत्र एक वैधानिक अधिकार पत्र है और यह वन अधिकार, जिसे अधिनियम के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित दस्तावेज के रूप में अधिकार धारकों को मान्यता दी गई है तथा प्रदायगी की गई है, की औपचारिक मान्यता है।

यह पति–पत्नी दोनों के नाम पर संयुक्त रूप से अथवा केवल एक प्रमुख परिवार के मामले में किसी एक जीवित प्रमुख सदस्य, जैसा भी मामला हो, के नाम पर पंजीकृत किया जाएगा । इसे एफ.आर.ए. की धारा4(4) के अनुसार कानून का समर्थन प्राप्त है तथा यह गैर हस्तांतरणीय, अविच्छद्य परन्तु आनुवंशिक हैं।

इसलिए, अंतिम अधिकार पत्र दस्तावेज़ जो वन अधिकार धारकों को दिया जाता है, में प्रदत्त वन अधिकार, अधिकारों का सीमांकन और अन्य प्रासंगिक जानकारी का स्पष्ट विवरण होना चाहिए। व्यक्तिगत वन अधिकार के लिये दस्तावेज में भूमि की सर्वेक्षण संख्या / खाता संख्या भी निर्दिष्ट होनी चाहिए।

हाल ही के दिनांक 10.4.2015 के परिपत्र सं. 23011/12/2015–एफ.आर.ए. में जनजातीय कार्य मंत्रालय ने दोहराया है कि एफ.आर.ए. की प्रक्रिया तभी पूरी होगी जब आर.ओ.आर. (अधिकारों का रिकार्ड) तैयार किया गया हो। अधिकारों की मान्यता का उद्देश्य तभी साकार होता है जब अधिकारों का स्थायी रिकार्ड सरकारी अभिलेख पुस्तकों में दर्ज किया जाता है।

अधिकारों का रिकार्ड कहां रखा जाएगा; राजस्व रिकार्ड में या वन रिकार्ड में ?

अधिकारों के अभिलेखों के रख–रखाव के संबंध में, एफ.आर.नियमावली के नियम 12 क (दिनांक 6.9. 2012 यथासंशोधित) में प्रावधान है कि अधिकारों को मान्यता देने तथा अधिकार पत्रों को जारी करने की प्रक्रिया पूरी होने पर राजस्व तथा वन विभागों को प्रसांगिक राज्य कानूनों के तहत अभिलेखों के अद्यतन करने की विनिर्दिष्ट अवधि अथवा 3 महीनों की अवधि के भीतर, जो भी पहले हो, निहितार्थ वन भूमि का अंतिम नक्शा तैयार करने तथा संबंधित प्राधिकारों को राजस्व तथा वन अभिलेखों में निहितार्थ वन अधिकारों को शामिल करने की आवश्यकता है। जनजातीय कार्य मंत्रालय के दिनांक 03.03. 2014 के परिपत्र एफ सं. 23011/06/2014–एफ.आर.ए. में इस स्थिति का पुनः उल्लेख किया गया है।

यह सुझाव दिया जाता है कि यदि वन भूमि राजस्व विभाग के प्रशासनिक नियंत्रणाधीन है, तो राजस्व

विभाग अधिकारों के अभिलेख का रखरखाव करेगा। यदि वन भूमि वन विभाग के प्रशासनिक नियंत्रणाधीन है, तो वन विभाग अभिलेखों का रखरखाव करेगा तथा व्यक्तिगत भूमि अधिकारों के लिए अधिकार पत्रों तथा ग्रामों के परिवर्तन के रिकार्ड को भी राजस्व अभिलेखों में अभिलेखित करने की आवश्यकता है। राज्य प्रासंगिक राज्य अभिलेखों में अधिकारों के रिकार्ड को दर्ज करने के लिए उचित कदम उठा सकते हैं।

उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश राज्य ने वन अधिकारों के रखरखाव के लिए एक नया कॉलम जोड़ने हेतु अधिकारों के अपने रिकार्ड (राज्य राजस्व कानून के तहत श्रेणी (6) के रूप में परिभाषित) में आशोधन किया है।

यह नोट किया जाना चाहिए कि एफ.आर.ए. के तहत जारी अधिकारों के रिकार्डमें भी जाति / जनजाति का उल्लेख यदि कोई हो, तो होना चाहिए, जिससे अधिकार धारक संबंधित है, ताकि भावी प्रक्रियाओं को सुविधाजनक बनाया जा सके ।

सामुदायिक वन संसाधन अधिकार

सी.एफ.आर. अधिकार सामुदायिक अधिकारों से कैसे भिन्न हैं ?

सामुदायिक वन अधिकार धारा 3(1) के तहत विभिन्न अधिकार हैं जो किसी ग्राम समुदाय के लिए निहितार्थ तथा मान्यता प्राप्त हैं,और एक सामुदायिक रूप में एक साथ प्रयोग किये जाते है। इसमें निस्तारी अधिकार (धारा 3 (1) (ख)), का अधिकार (धारा 3 (1) (ग)), मछली पकड़ने और चराई के अधिकार (धारा 3 (1) (घ)), वन ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तित करने का अधिकार (धारा 3 (1) (ज), जैव विविधता का उपयोग करने का अधिकार और बौद्धिक संपदा अधिकार (धारा 3(1) (ट)) और इसी तरह अन्य अधिकार शामिल होंगे।

हालांकि, सामुदायिक वन संसाधन (सी.एफ.आर.) को धारा 2 (क) के तहत परिभाषित किया गया है:

> ''(क) ''सामुदायिक वन संसाधन" का तात्पर्य ग्राम के पारंपरिक या प्रथागत सीमाओं के अंदर प्रथागत साधारण वन भूमि है अथवा वह वन भूमि है जहाँ चारागाही समुदायों के पास मौसमी उपयोग के लिए परंपरागत पहुंच थी, जिनमें आरक्षित वनों, संरक्षित वनों तथा सुरक्षित क्षेत्रों जैसे अभयारण्यों और राष्ट्रीय उद्यानों भी शामिल है''।

इसलिए, सामुदायिक वन संसाधन (सी.एफ.आर.) प्रथागत साधारण वन है जिसमें ग्राम के पारंपरिक या प्रथागत सीमाओं की बात की गई है, और चरागाहों के अपेक्षित उपयोग को भी शामिल करता है। यदि कोई संदेह हो,तो यह परिभाषा स्पष्ट करती है कि जहां भी इस तरह के पारंपरिक या प्रथागत वनों को संरक्षित क्षेत्र के रूप में घोषित किया गया है, वेसी.एफ.आर. की परिभाषा के तहत भी शामिल हैं। इसलिए, एफ.आर.ए. के तहत सी.एफ.आर. अधिकार किसी पूर्व निर्धारित वैधानिक अधिकार अथवा उपयोग द्वारा प्रतिबंधित नहीं होगा।

वन अधिकार की धारा 3 (1) (i) में निम्नानुसार उल्लिखित है:

''(i) किसी भी सामुदायिक वन संसाधन की सुरक्षा, पुनर्जनन या संरक्षण या प्रबंधन करने का अधिकार जिसे वे सतत उपयोग के लिए पारंपरिक रूप से सुरक्षित और संरक्षित करते रहे है''।

एफ.आर.ए. की धारा 5 के द्वारा इन प्रावधानों को आगे बढ़ाया गया है जहां यह उल्लेख किया गया है कि ग्राम सभाके पास निम्न करने के अधिकार हैंः

(क) वन्यजीव, वन और जैव विविधता की रक्षा करना;

(ख) यह सुनिश्चित करना कि निकटवर्ती जलग्रहण क्षेत्र, जल स्रोत और अन्य पारिस्थितिक संवेदनशील क्षेत्र पर्याप्त रूप से संरक्षित हैं;

(ग) यह सुनिश्चित करना कि अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासियों के पर्यावास उनकी सांस्कृतिक और प्राकृतिक विरासत को प्रभावित करने वाली विनाशकारी प्रथाओं के किसी भी रूप से संरक्षित हैं;

(घ) कि सामुदायिक वन संसाधनों तक पहुँच को विनियमित करने के लिए ग्राम सभा में लिए गए निर्णय को सुनिश्चित करना और ऐसी गतिविधियों को रोकना जो जंगली जानवरों, वन तथा जैव विविधता के अनुपालन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है।

इसलिए, सी.एफ.आर. अधिकार, धारा 3 (1) के तहत निरूपित विभिन्नर वन अधिकारों की तुलना में अधिक व्यापक है, क्योंकि यह ऐसे भौगोलिक क्षेत्र में व्याप्त है जो समुदाय के पारंपरिक और प्रथागत रूप से उपयोग में लाया जाता है और यह सी.एफ.आर. क्षेत्र, और वन्यजीव, जल स्रोतों, इसमें शामिल जैव विविधता की क्षति से सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए ग्राम सभा को महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व और अधिकार भी प्रदान करता है।

सामुदायिक वन संसाधन के मामले में, समुदायिक दावे को दायर करने वाला दावेदार कौन होगा? किसके नाम पर सामुदायिक अधिकार निहित किया जाएगा?

एफ.आर. नियमावली के प्रपत्र–ग के साथ पठित नियम 11 (1)(क) (दिनांक 6.9.2012 को यथा संशोधित) में ग्राम सभा द्वारा सामुदायिक वन संसाधन (सी.एफ.आर.) दावों को दाखिल, निर्धारित और सत्यापित करने के लिए प्रक्रिया निर्धारित है।

जैसा कि प्रपत्र–ग की सामग्री से स्वतः स्पष्ट है, प्रत्येक सदस्यों की अनुसूचित जनजाति / अन्य परंपरागत वन निवासी की स्थिति सहित जब ग्राम सभा के सदस्यों की एक सूची आवश्यक रूप से संलग्न की जानी है, तब उसमें ग्राम सभा के प्रत्येक सदस्यों के हस्ताक्षर आवश्यक नहीं हैं।

ग्राम सभा के सभी सदस्यों के हस्ताक्षर की आवश्यकता अनेक ग्रामों में प्रक्रिया को प्रभावी रूप से पूरा होने में असंभव बना देगा। सी.एफ.आर. के लिए उक्त दावे के समर्थन में ग्राम सभा का एक संकल्प आवश्यक है।

जैसे कि अनुलग्नक IV पर, सी.एफ.आर. के लिए अधिकार पत्र हेतु प्रारूप से स्पष्ट है, अधिकार पत्र ग्राम सभा के नाम से जारी किया जाएगा जिसमें दावे भी पंजीकृत हों।

सी.एफ.आर. अधिकारों के मामले में कौन से दस्तावेजी साक्ष्यों की आवश्यकता है ?

सी.एफ.आर. अधिकार, **समुदाय के उपभोग अधिकारों** से संबंधित है और कई वन दस्तावेज जैसे वन विभाग की कार्य योजनाएं, विवरणिका, वन व्यवस्थापन रिपोर्ट और अन्य दस्तावेज हैंजो यह प्रदर्शित करते हैं कि वन क्षेत्र अधिकारों से अधिग्रहित हैं।

मौखिक साक्ष्य के अलावा, ये दस्तावेज वन निवासियों द्वारा वनों के उपयोग को पर्याप्त रूप से प्रमाणित करते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य पद्यतियां जैसे संयुक्त वन प्रबंधन, पारंपरिक उपयोग, सामुदायिक सुरक्षा आदि भी प्रमाण के रूप में स्वीकार्य है ।

भौतिक प्रमाण और मौखिक साक्ष्य भी एफ.आर. नियमावली (दिनांक 6.9.2012 को यथा संशोधित) के नियम 13 के तहत स्वीकार्य है। वास्तव में, नियम 13 (2) साक्ष्यों के कुछ अतिरिक्त प्रकार को सूचीबद्ध करता है जिस पर सी.एफ.आर. अधिकारों के निर्धारण के लिए निर्भर किया जा सकता है, जैसा कि वर्तमान आरक्षित वन को संरक्षित वन अथवा **गोचर** अथवा अन्य ग्राम भूमियों, **निस्तारी** वनों के साथ-साथ पारंपरिक एवं वर्तमान कृषि पद्यति के रूप में वर्गीकरण किया गया है। नियम 12क (11) में यह विनिर्दिष्ट है कि एस.डी.एल.सी. / डी.एल.सी.दावे के समर्थन में किसी विशेष साक्ष्य पर जोर नहीं दे सकती तथा कानून की इस स्थिति को हाल ही के निर्णय में गुजरात उच्च न्यायालय से भी अनुमोदन प्राप्त हो चुका है।[10]

जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार के दिनांक 28.04.2015 के परिपत्र (एफ. सं. 23011/18/2015-एफ.आर.ए.) के माध्यम से यह स्पष्ट किया जा चुका है कि राज्य सरकारों को मानचित्रों का एक भू-संदर्भित डेटाबेस तैयार करना चाहिए और सी.एफ.आर. अधिकारों के लिए दावा करने वाले वन निवासियों के लिए ऐसे मानचित्र उपलब्ध कराए जाने चाहिएं ताकि वास्तविक दावाकर्ता छूट न जाएं। विशेष रूप से सी.एफ.आर. अधिकारों के संबंध में जी.आई.एस. आधारित तकनीक के उपयोग पर विस्तृत सुझाव दिनांक 27.07.2015 के परिपत्र (सं. 23011/18/2015-एफ.आर.ए.) के माध्यम से तैयार किये जा चुके हैं।

पेसा क्षेत्र में भी, गैर-अनुसूचित जनजातियां हैं जो परंपरागत रूप से सामुदायिक संसाधनों का उपयोग कर रही हैं, लेकिन वे एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकारों की मान्यता के पात्र नहीं हो सकते हैं । क्या इन सामुदायिक संसाधनों पर उनको भी अधिकारप्राप्त होते हैं ?

गैर-अनुसूचित जनजातियों या अपात्र अन्य परंपरागत वन निवासियों के सामुदायिक अधिकार पांचवीं अनुसूची वाले क्षेत्रों में प्रभावी नहीं होंगे जहां पेसा लागू है ।
एफ.आर.ए. की धारा 13 स्पष्ट रूप से यह प्रावधान है कि-

''इस अधिनियम और पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम, 1996 में अन्यथा उपबंधित के सिवाय इस अधिनियम के उपबंध तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबंधों के अतिरिक्त होंगे, न कि उनके अल्पीकरण में।''

[10]ऐक्शन रिसर्च इन कम्यूनिटी हेल्थ एण्ड डेवलपमेंट (एआरसीएच) बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, रिट याचिका (पीआईएल) सं. 100/2011 में दिनांक 03.05.2013 का निर्णय, गुजरात उच्च न्यायालय

इसका अर्थ यह है कि एफ.आर.ए. स्पष्ट रूप से एक ऐसी व्यवस्था का समर्थन करता है जहां पेसा द्वारा शासित पांचवी अनुसूची वाले क्षेत्रों में गैर–अनुसूचित जनजाति या अपात्र ओ.टी.एफ.डी. के पहले से मौजूद सामुदायिक अधिकार जारी रहेंगे।

इसलिए, गैर–अनुसूचित जनजाति के सामुदायिक अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, जो पांचवी अनुसूची क्षेत्रों में पेसा लागू होने पर सामुदायिक संसाधनों का पारम्परिक रूप से उपयोग कर रहे है, भले ही, एफ.आर.ए. के तहत उन क्षेत्रों में इन अधिकारों की मान्यता के लिए पात्र न हों।

तथापि, यह इस बात पर निर्भर करता है कि क्या ये सामुदायिक अधिकार पहली नजर में न्यायोचित हैं और किसी सुरक्षात्मक विधान, जैसे जनजातीय भूमि के हस्तातंरण को रोकने से संबंधित कानूनों का उल्लंघन नहीं करते हैं।

सामुदायिक वन संसाधन के लिए संरक्षण एवं प्रबंधन योजना कौन तैयार करेगा ?

एफ.आर. नियमावली (6.9.2012 को यथा संशोधित) के अनुसार अधिनियम की धारा 5 के प्रावधानों के सम्पादन के लिए नियम 4 (1) (ङ) के तहत ग्राम सभा द्वारा गठित समिति एफ.डी.एस.टी. और ओ. टी.एफ.डी. के लाभ के लिए सी.एफ.आर. जैसी निरंतर और समान रूप से व्यवस्था करने के क्रम में सी. एफ.आर. के लिए संरक्षण और प्रबंधन योजनाओं को तैयार करना आवश्यक है। ऐसी संरक्षण और प्रबंधन की योजनाओं को ऐसे संशोधन के साथ जिसे समिति द्वारा आवश्यक माना जा सकता है, वन विभाग की सूक्ष्म योजनाओं या कार्य योजनाओं या प्रबंधन योजनाओं के साथ एकीकृत किया जाना चाहिए।

समिति की योजना और कार्यों की निगरानी और नियंत्रण ग्राम सभा द्वारा किया जाता है। ग्राम सभा संरक्षण और प्रबंधन योजना को और संशोधित कर सकती है तथा यदि यह मानती है कि ये सामुदायिक वन संरक्षण और प्रबंधन के लिए आवश्यक हैं तो प्रतिबंध लगा सकती है। जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी दिनांक 23.04.2015 (फा.सं.23011/16/2015–एफ.आर.ए.) के परिपत्र में स्पष्ट किया गया है कि प्रत्येक ग्राम सभा सी.एफ.आर. के संरक्षण और प्रबंधन योजना के लिए अपने स्वयं के सरल प्रारूप को विकसित करने के लिए स्वतंत्र है। इस तरह की योजना को सदस्यों द्वारा आसानी से समझने योग्य होना चाहिए और इसमें वन तक पहुंच, उपयोग और संरक्षण को नियंत्रित करने वाले नियम और विनियम भी शामिल हो सकते हैं।

किसी भी अन्य कानून में उल्लिखित कोई अन्य समिति नियम 4(1) (ङ) के तहत समिति में निहित इस शक्ति को हड़पने के लिए अर्हता प्राप्त नहीं कर सकती है, और न ही ग्राम सभा किसी भी प्रस्ताव के माध्यम से अपनी जिम्मेदारियों को स्वयं समाप्त करने का निर्णय ले सकती है।

क्या अधिकार पत्र धारक के पास वन भूमि पर खड़े पेड़ों पर भी अधिकार है जिनके एफ.आर.ए. के तहत उनके अधिकारों को मान्यता दी गई और अधिकार प्रदत्त हैं ?

जी हां, अधिकार पत्र धारक को धारा 3(1)(क) के तहत एफ.आर.ए. के तहत वन भूमि के पेड़ों पर अधिकार है जिनके लिए वन अधिकारों को मान्यता दी गई है।

एफ.आर.ए. की धारा 3(1)(क) वन भूमि में रहने और पर्यावास या आजीविका के लिए स्व–खेती के लिए एफ.डी.एस.टी. और ओ.टी.एफ.डी. के अधिकार को मान्यता देती है। उपर्युक्त को देखते हुए, अधिकार पत्र धारक को उक्त वन भूमि पर खड़े पड़ों पर अधिकार है। हालांकि,पेड़ों की कटाई और निपटान को उसी तरह से माना जाएगा जैसे कि संबंधित राज्य कानूनों के तहत निजी भूमि पर पेड़ों के लिए होता है। इस तरह से, ऐसे पेड़ों की कटाई और निपटान उन कानूनों में विनिर्दिष्ट शर्तों, यदि कोई होसक्षम प्राधिकारी से अनुमति के लिए आवश्यकताओं के अधीन होगी।

इस तरह के पेड़ों से लघु वन उपज को इकट्ठा करने और उपयोग करने पर कोई प्रतिबंध नहीं होगा। इसके अलावा, जहां लकड़ी के अधिकार पहले से ही 'निस्तारट' या किसी अन्य वैधानिक या पारम्परिक/प्रथागत अधिकार के रूप में प्रदत्त हैं, जो कि यह एक अलग बात है और इस तरह के अधिकार की निरंतरता के लिए एफ.आर.ए. के तहत कोई बाधा नहीं है।

जे.एफ.एम समितियों की स्थिति

क्या एफ.आर.ए. पहले से मौजूद जे.एफ.एम. समितियां जो कि उन राज्यों में पिछले 15–20 वर्षों से अस्तित्व में हैं, वन अधिकार नियमावली के नियम 4 (1) (ङ) के तहत समितियोंमें परिवर्तित करने की अनुमति देता है ?

सबसे पहले, यह समझने की जरूरत है कि जे.एफ.एम. समितियां वैधानिक निकाय नहीं हैं, बल्कि के भारत सरकार के जून 1990 संकल्प[11] के तहत गठित की गई हैं। अधिकांश राज्यों में, ये समितियाँ एक जे.एफ.एम. स्कीम के तहत वनों के प्रबंधन में लोगों को शामिल करने के उद्देश्य के साथ कार्य कर रही हैं।

दूसरी ओर, जहां तकसी.एफ.आर. अधिकार प्रदान करने का संबंध है, यह एक केंद्रीय कानून, एफ.आर.ए. के तहत एक मूल सांविधिक अधिकार है। यह ग्राम सभा का विशेषाधिकार है कि वह यह तय करे कि नियम 4 (1)(ङ) के तहत नई समिति में जे.एफ.एम. समितियों के सदस्यों को नामित करना है या नए सदस्यों के साथ इसका गठन करे।

यह आगे स्पष्ट किया गया है कि केवल ग्राम सभा के सदस्य नियम 4 (1)(ङ) के तहत समिति के सदस्य बनने के लिए पात्र हैं। चूंकि ग्राम पंचायत स्तर पर कई जे.एफ.एम. समितियां स्थापित की गई हैं, इन्हें नियम 4 (1)(ङ) के तहत एक समिति में परिवर्तित करने में तकनीकी कठिनाई होगी क्योंकि उनके पास कई ग्राम सभाओं के सदस्य होंगे। इसके अलावा, ज्यादातर राज्यों में वन रक्षक जे.एफ.एम. समिति के पदेन सदस्य सचिव हैं; ऐसे वन रक्षक स्वाभाविक रूप से एफ.आर.ए. के तहत 4 (1)(ङ) समिति के सदस्य नहीं हो सकते, सिवाय उस गाँव के जहां के वह स्वयं निवासी है।

यह याद रखना भी महत्वपूर्ण है कि जे.एफ.एम.सी द्वारा प्रबंधित क्षेत्र और सी.एफ.आर. सह–मियादी नहीं हैं – जहां सी.एफ.आर. पारंपरिक सीमाओं और प्रथागत पद्यति को मान्यता देता है वहीं जे.एफ.एम.

[11] पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार के दिनांक 01 जून, 1990 का पत्र सं. 6.21/89–पीपी

सी वन विभाग के कार्य योजना की प्राथमिकताओं के आधार पर क्षेत्र का प्रबंधन करती है ।

नियम 4 (1)(ङ) के तहत समिति में जे.एफ.एम. समितियों का स्वः रूपांतरण एफ.आर.ए. के तहत न तो अनिवार्य है और न ही वांछनीय है, क्योंकि नियम 4 (1)(ङ) के तहत समिति के उद्देश्य, संरचना और अधिदेश जे.एफ.एम. के उद्देश्य, संरचना और अधिदेश से अलग हैं। एफ.आर.ए. के तहत सामुदायिक अधिकारों के साथ जे.एफ.एम. समितियों की बराबरी करने की प्रथा को स्पष्ट शब्दों में अमान्य किया गया है (देखें अर्ध.शा.पत्र सं. एमटीए एंड पीआर/वीआईपी/18/88/2013 दिनांक 4.4.2013)।

क्या जे.एफ.एम. क्षेत्रों को सीधे सामुदायिक वन संसाधन शीर्षक में परिवर्तित किया जाना चाहिए ?

एफ.आर.ए. और एफ.आर. नियमावली के प्रावधानों के अनुसार, सी.एफ.आर. क्षेत्रों में जे.एफ.एम. क्षेत्रों का स्वः रूपांतरण न तो अनिवार्य है और न ही वांछनीय है, क्योंकि जे.एफ.एम. के उद्देश्य, संरचना और अधिदेश,एफ.आर.ए. के तहत सामुदायिक वन संसाधन के तहत वन अधिकारसे अलग हैं ।

जैविक विविधता अधिनियम, 2002 के तहत समितियों के बारे में बताएं ?

यह पाया गया है कि कुछ राज्यों में जैविक विविधता अधिनियम, 2002 के तहत समितियों को सी.एफ.आर. क्षेत्रों का प्रबंधन और नियंत्रण करने की शक्तियां दी जा रही हैं। यह एफ.आर.ए. के तहत स्वीकार्य नहीं है, और जैविक विविधता अधिनियम, 2002 के तहत समितियां नियम 4 (1) (ङ) के तहत समिति होने के लिए स्वःयोग्य नहीं हो सकती हैं। उपर्युक्त के अनुसार ग्राम सभा द्वारा समिति की स्थापना के लिए एफ.आर.ए. और एफ.आर. नियमों के तहत उचित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए।

विकास और एफ.आर.ए.

एफ.आर.ए. के तहत अधिकारों की मान्यता के बाद, क्या वन अधिकार धारकों को वन भूमि और सामुदायिक वन संसाधनों के विकास के लिए कोई सहायता मिल सकती है ?

एफ.आर. नियमाली (6.9.2012 को यथा संशोधित) वन अधिकार धारकों को दावे के बाद सहायता के लिए प्रावधान करती है, और राज्य सरकार को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि वनवासियों और समुदायों जिनके अधिकारों को एफ.आर.ए. के तहत मान्यता दी गई है और निहित किया गया है (नियम 16 देखें), उन्हें भूमि के सुधार, भूमि उत्पादकता, बुनियादी सुविधाएं और अन्य आजीविका के उपाय, सहित सभी सरकारी स्कीमों की सहायता प्रदान की जाए। एफ.आर. नियमावली के अनुसार राज्य सरकारों से अपेक्षा है कि यह जिम्मेदारी जनजातीय विकास और सामाज कल्याण, पर्यावरण और वन, राजस्व, ग्रामीण विकास, पंचायत राज और अन्य विभागों की होगी।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि अधिकारों की मान्यता के पहले और निहित अधिकारों की प्रक्रिया के दौरान, एफ.आर.ए. की धारा 3 (2) के तहत विकासात्मक अधिकारों का उपयोग वन निवासी समुदायों द्वारा किया जा सकता है।

क्या राज्यों को सी.एफ.आर. क्षेत्रों के सीमांकन और एफ.आर.ए. के सुचारू कार्यान्वयन के लिए अलग से बजट आबंटन मिल सकता है ?

भारत के संविधान का अनुच्छेद 275 (1) प्रत्येक राज्य सरकार को एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन के लिए अनुदान के लिए आवेदन करने का अवसर प्रदान करता है। जनजातीय उप–स्कीमों (टी.एस.एस.) को विशेष केंद्रीय सहायता (एससीए) के तहत अनुदान को उस भूमि के विकास के लिए भी आवंटित किया जा सकता है, जिसके अधिकारों को मान्यता दी गई है।

क्या वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के अंतर्गत धारा 3 (2) के तहत विकास सुविधाओं के लिए वन भूमि के परिवर्तन के लिए वन मंजूरी की आवश्यकता है ?

वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के तहत किसी अनुमति की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि एफ.आर.ए. वन अधिकारों को धारा 4 (7) के संदर्भ में 1980 के अधिनियम की सभी बाधाओं और प्रक्रियात्मक आवश्यकता से मुक्त करता है।

हालांकि इस तरह की विकास सुविधाओं को एफ.आर.ए. की धारा 3 (2) के तहत शर्तों को पूरा करना होगा, अर्थात्:

- सुविधाओं को एक सरकारी निकाय द्वारा प्रबंधित किया जाता है;
- एक हेक्टेयर से कम वन भूमि का परिवर्तन शामिल है;
- पचहत्तर से अधिक पेड़ों की कटाई नहीं;
- ग्राम सभा की सिफारिश; तथा
- एफ.आर.ए. की धारा 3 (2) के तहत सूचीबद्ध तेरह मदों तक सीमित।

वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 या वन क्षेत्र में किसी भी अन्य विकास गतिविधि के तहत वन भूमि के परिवर्तन से पहले एफ.आर.ए. के अनुपालन का प्रदर्शन करने के लिए आवश्यक न्यूनतम आवश्यकताएं क्या हैं ?

एफ.आर.ए. के अंतर्गत अनुपालन के लिए न्यूनतम आवश्यकताएं हैः

- संबंधित ग्राम सभा यह प्रमाणित करे कि एफ.आर.ए. के तहत अधिकार मान्यता प्रक्रिया परिवर्तन के लिए प्रस्तावित क्षेत्र में पूरी हो गई है, और
- ग्राम सभा निर्णित संकल्प के माध्यम से कथित गैर–वन उद्देश्यों के लिए वन भूमि के परिवर्तन का समर्थन करता है। इस उद्देश्य के लिए बुलाई गई बैठक में 50% कोरम अनिवार्य है।

एफ.आर.ए. के किस प्रावधान के तहत वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के तहत वन भूमि को परिवर्तित करने से पहले ग्राम सभा का निर्णय लेना आवश्यक है ?

एफ.आर.ए.अपनी प्रस्तावना में यह वैधानिक उद्देश्य स्पष्ट करता है कि एस.टी. और ओ.टी.एफ.डी. वन निवासियों के मान्यता प्राप्त अधिकारों में दिर्घकालीन उपायों के लिए **जिम्मेदारियां और प्राधिकार,जैव विविधता के संरक्षण और पारिस्थितिकी संतुलन को बनाये रखना** सम्मिलित है। यह आगे स्वीकार करता है कि पैतृक भूमि पर वन अधिकारों को पर्याप्त रूप से मान्यता नहीं दी गई थी, जिसके परिणामस्वरूप

ऐसे वन निवासियों के प्रति **ऐतिहासिक अन्याय** हुआ है,_**जो वन पारिस्थिति की प्रणाली को बचाने और बनाये रखने के लिए अभिन्न अंग है।**

धारा 5 वन अधिकार धारकों, ग्राम सभा और ग्राम स्तर के संस्थानों को वनों, जलग्रहण क्षेत्रों, जैव विविधता, वन्य जीवन और वन निवासियों की'सांस्कृतिक तथा प्राकृतिक विरासत की रक्षा करने का अधिकार देती है। विशेष रूप से, धारा 5 (घ) ग्राम सभा को उन गतिविधियों को विनियमित करने और रोकने का अधिकार देती है जो जंगल, वन्य जीवन और जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव ड़ालती हैं। यह शक्ति वन निवासियों के साथ एक क्षेत्र में प्रत्येक ग्राम सभा में निहित है।

इसके अतिरिक्त, धारा 3 (1) (झ) में 'वन अधिकारों' की परिभाषा में ऐसे सामुदायिक 'वन संसाधन की रक्षा, पुनर्जीवन या संरक्षण या प्रबंधन करने का अधिकार शामिल है जिसे वे पारंपरिक रूप से स्थायी उपयोग के लिए संरक्षित और सुरक्षित करते रहे हैं'। यह सुनिश्चित करने के लिए नियम 12–ख (3) डी.एल.सी. को कर्तव्य प्रदान करता है कि इसके भौगोलिक अधिकार क्षेत्र के तहत वन निवासियों वाले सभी गांवों की धारा 3 (1) (झ) के तहत वन अधिकारों को मान्यता दी जाए।

इन सभी प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, **उड़ीसा खनन निगम के मामले**[12] में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि बड़े या छोटे गैर–वन उद्देश्यों या किसी भी विकास परियोजनाके लिए वन भूमि के परिवर्तन से पहले प्रभावित ग्राम सभाओं का निर्णय आवश्यक है। वन भूमि के परिवर्तन से पहले ग्राम सभा के ऐसे निर्णय को प्राप्त करने में विफलता प्रभावी रूप से अधिनियम की धारा 5 को अप्रभावी बनाने के समान होगी।

एफ.आर.ए. की धारा 3 (2) के तहत, विकास पहलों की 13 श्रेणियों के लिए वन भूमि के परिवर्तन से पहले ग्राम सभा की सिफारिश आवश्यक है, इस शर्त के अधीन कि ऐसी पहल 1 हेक्टेयर वन भूमि तक सीमित है और 75 से अधिक पेड़ों की कटाई की आवश्यकता नहीं है। यदि एक छोटी सी पहल करने के लिए 1 हेक्टेयर वन भूमि के परिवर्तन के लिए ग्राम सभा की अनुमति आवश्यक होती है, औरकिसी बड़ी परियोजना,जिसमें पर्यावरणीय क्षति की संभावना अधिक है, को ग्राम सभा की अनुमति की आवश्यकता न होना, यह बहुत अतार्किक होगा।

क्या कुछ प्रकार की परियोजनाओं के लिए एफ.आर.ए.के तहत आवश्यक अधिकारों की मान्यता की प्रक्रिया से छूट दी जा सकती है ?

जी नहीं । वन भूमि को परिवर्तित करने से पहले एफ.आर.ए. का अनुपालन अनिवार्य आवश्यकता है। इससे पहले कि वन भूमि को परिवर्तित कर दिया जाए। अधिनियम किसीभी श्रेणी की परियोजनाओं को कोई छूट प्रदान नहीं करता है। 'सर्वोच्च न्यायालय के **गोदावर्मन मामले** के निर्णय'[13] अनुसार एफ.आर.ए. की धारा 2 (घ) के तहत वन भूमि की परिभाषा व्यापक रूप से की गई है।

विकासात्मक पहलों में ग्राम सभा की केंद्रीय भूमिका एफ.आर.ए.में अद्वितीय नहीं है। यह पेसा (PESA),

[12]उड़ीसा खनन निगम बनाम पर्यावरण एवं वन मंत्रालय तथा अन्य, 2013 (6) एससीसी 476

[13]पूर्व टिप्पण 1

जो कि विभिन्न राज्यों के अनुसूचित क्षेत्रों के पंचायती राज विधानों में भी उल्लेखित है। ग्राम सभा की भूमिका की केंद्रीयता को भी हाल ही में **उड़ीसा खनन निगम के मामले**[14] में सर्वोच्च न्यायालय से पुष्टि प्राप्त हुई है, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने समुदायिक या व्यक्तिगत वन अधिकारों के दावे को निर्धारित करने और वन क्षेत्रों में विकास गतिविधियों के बारे में निर्णय लेने में ग्राम सभा (ओडिशा में पल्ली सभा के रूप में जाना जाता है) की केंद्रीय भूमिका को सामने रखा है।

क्या वन भूमि के परिवर्तन के लिए एफ.आर.ए. के तहत किसी प्रकार की 'एफ.आर.ए. मंजूरी' या' अनापत्ति प्रमाण–पत्र' की आवश्यकता है ?

विकास परियोजनाओं के लिए विभिन्न प्रकार की निकासी और विभिन्न सांविधिक कानूनों के तहत मंजूरी की आवश्यकता होती है, जैसे कि वन संरक्षण अधिनियम, 1980 के तहत ''वन मंजूरी" पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1985 और इसके विभिन्न नियम और दिशानिर्देश, के तहत पर्यावरण मंजूरी प्रकृति में विनियामक हैं।

हालांकि, एफ.आर.ए., मूल अधिकारों को मान्यता देता है और निहित करता है, और इसलिए पूरी तरह से अलग आधार पर खड़ा है। किसी भी अन्य निहित और मूल अधिकार की तरह, एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकारों को भी कानून की उचित प्रक्रिया के बिना परिवर्तित करना, अधिकार धारकों को हानि पोहचा सकता है। इसे धारा 4 (5) द्वारा दोगुना स्पष्ट किया गया है जिसके लिए आवश्यक है कि एफ. आर.ए. के तहत सभी मान्यता और सत्यापन प्रक्रियाएं, वन निवासी एस.टी. और ओ.टी.एफ.डी. को हटाने से पहले पूरी की जानी चाहिए।

ग्राम सभा में अपने वनों और सी.एफ.आर. की रक्षा, संरक्षण और प्रबंधन करने की शक्ति और जिम्मेदारी निहित है। इसलिए, क्षेत्र के जंगलों को किसी अन्य विकास उद्देश्य के लिए परिवर्तित करने से पहले, ग्राम सभा को विशेष रूप से बुलाई गई बैठक में इस पर विचार करना होगा। सभी तथ्यों पर ध्यान से विचार करने के बाद, और यह प्रमाणित करने के बाद, कि अधिकार मान्यता प्रक्रिया पूरी हो चुकी है, ग्राम सभा प्रस्तावित परिवर्तन पर निर्णय लेगी । **उड़ीसा माइनिंग कॉरपोरेशन केस**[15] में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीशों के फैसले के बाद यह देश का कानून है।

यह प्रक्रिया एक प्रशासनिक या नियामक प्राधिकरण द्वारा वन मंजूरी या अनापत्ति प्रमाणपत्र '(एनओसी) के अनुदान के साथ तुलनीय नहीं है। इसके बजाय, इस प्रक्रिया को ग्राम सभा द्वारा विचारशील और सूचित मनोनियोग की आवश्यकता है ताकि यह मामले पर सावधानीपूर्वक और विचारशील निर्णय ले सके।

विकास परियोजना के संबंध में संबंधित ग्राम सभा की अनुमति प्रमाणित करने के लिएसक्षम प्राधिकारी कौन है ?

ग्राम सभा वैधानिक प्राधिकरण है जिसे एफ.आर.ए. की धारा 6 के तहत दावों के निर्धारण और सत्यापन की प्रक्रिया शुरू करनी होती है। यह वैधानिक प्राधिकरण भी है जिसमें धारा 3 (1) (झ) के अंतर्गत वन

[14] पूर्व टिप्पण 1

[15] उड़ीसा खनन निगम बनाम पर्यावरण एवं वन मंत्रालय तथा अन्य, (2013) 6 एससीसी 476

अधिकार निहित है, साथ ही साथ धारा 5 के तहत सामुदायिक वन संसाधनों की सुरक्षा, संरक्षण, प्रबंधन और संरक्षण के लिए शक्ति और जिम्मेदारी है। इसके अलावा, एफ.आर.ए. नियमावलीग्रामसभा में जिम्मेदारियों, कार्यों और शक्ति की अधिकता और एफ.आर. निहित करती है। इसलिए, ग्राम सभाकी उचित ढ़ंग से बुलाई गई बैठक जो 50% न्यूनतम कोरम की शर्त को पूरा करती है, के द्वारा यह प्रमाणित करने में सक्षम प्राधिकारण है कि कोई विशेष विकास परियोजना को ग्राम समुदाय द्वारा स्वीकृति दी गई है।

यह केवल तार्किक है कि ग्राम सभा का प्रमाणन सभी पात्र वन निवासी एसटी और ओ.टी.एफ.डी. पर लागू होना चाहिए, चाहे उन्होंने दावे दायर किए हों या ये दावे प्रक्रिया में हों या जहां दावे दाखिल किए ही नहीं गए हों।

यह प्रमाणित करने के लिए सक्षम प्राधिकारी कौन है कि एफ.आर.ए. के तहत अधिकार मान्यता प्रक्रिया पूरी हो गई है ?

ऊपर वर्णित समान कारणों के लिए, एक विशेष वन क्षेत्र में एफ.आर.ए. के तहत अधिकार मान्यता प्रक्रिया पूर्ण है, इसको प्रमाणित करने के लिए सक्षम प्राधिकारी संबंधित ग्राम सभा है। इसके अलावा, कोई अन्य प्राधिकारण न तो दावों को आमंत्रित नहीं कर सकता है या न ही उन्हें दाखिल करने की तारीख बढ़ा सकता है, और इसलिए कोई अन्य प्राधिकरण यह निर्धारण भी नहीं कर सकता है।

जहां भारतीय वन अधिनियम, 1927 और वन्य जीवन (संरक्षण) अधिनियम, 1972 के तहत व्यवस्थापन पहले ही पूरी हो चुकी हैं, क्या एफ.आर.ए. के तहत अधिकारों का फिर से निर्धारित करना आवश्यक है ?

एफ.आर.ए. की प्रस्तावना की एक झलक यह प्रदर्शित करती है कि इसका उद्देश्य न केवल वन निवासी समुदायों के अधिकारों को पहचानने में विफलता के ऐतिहासिक अन्याय को ठीक करना है, बल्कि यह भी है कि यह वन निवासी समुदायों में ''चिरस्थायी उपयोग के लिए जिम्मेदारियों और अधिकार, जैव विविधता के संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन के रखरखाव के लिए ... जिससे वनों की संरक्षण व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण के साथ निहित है ... ''एफ.आर.ए. इस धारणा पर आधारित है कि वन निवासी समुदाय" वन पारिस्थितिकी प्रणालियों के अस्तित्व और स्थिरता के लिए अभिन्न अंग हैं"।

इसलिए, एफ.आर.ए. वन अधिकारों की मान्यता और अधिकार निहित करने पर ध्यान केंद्रित करता है, जो मूल प्रकृति के हैं, और अधिकारों के ''अदायगी" से संबंधित नहीं हैं, जिसमें उनका मुआवजा और परिशमन शामिल है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एफ.आर.ए. का अनुपालन सुनिश्चित करने की आवश्यकता, विकास परियोजनाओं के कार्यान्वयन में बाधा बनने के बजाय, वास्तव में यह सुनिश्चित करेगी कि वन निवासी समुदाय विकास परियोजना के निर्णय निर्माण प्रक्रिया में पूरी तरह से भागीदारी कर रहे हैं। इस प्रकार लोकतांत्रिक निर्णय प्रक्रिया के संवैधानिक व वैधानिक मानको की आवश्यकताओं को आगे बढ़ा रहे हैं।

विविध

क्या राज्य सरकार पूरे राज्य में एक समान तरीके से एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन के लिए नियम और दिशानिर्देश तैयार कर सकती है ?

केवल केंद्र सरकार को विधायी नियमावली (एफ.आर.ए. की धारा 14 के तहत) अधिनियमित और अधिसूचित करने और सामान्य या विशेष निर्देश जारी करने (एफ.आर.ए. की धारा 12 के तहत) की अनुमति है।

हालांकि, राज्य सरकार के पास एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन के उद्देश्य से कार्यकारी निर्देश जारी करने के खिलाफ कोई रोक नहीं है, जब तक वे धारा 12 के तहत एफ.आर.ए., एफ.आर. नियमावली और निर्देश कीशक्ति के अधीन हैं। इसके अलावा, राज्य के राज्यपाल अनुसूचित क्षेत्रों के लिए भारत के संविधान की पांचवीं अनुसूची के पैरा 5 के तहत विनियम जारी कर सकते हैं।

कुछ व्यवस्थापन में जनजातीय लोग मांग कर रहे हैं कि खेती के तहत आने वाली भूमि को उनके सामान्य नाम पर सौंपा जाए। क्या यह एफ.आर.ए. के तहत अनुमन्य है ?

एफ.आर.ए. की धारा 3 (1) (क) जनजातियों के समुदाय के नाम पर खेती के लिए सामान्य कब्जे के तहत वन भूमि पर अधिकार की मान्यता और प्रदायगी निहित है। हालाँकि, अधिनियम की धारा 4 (6) के प्रावधानों के मद्देनजर जनजाति समुदाय के कब्जे वाली ऐसी वन भूमि को वास्तविक कब्जे वाले क्षेत्र में प्रतिबंधित कर दिया जाएगा। (नीचे देखें)

एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकारों के लिए अधिकार पत्र कैसे और किसके नाम पर प्रदान किए जाते हैं ?

एफ.आर.ए. की धारा 4 (4) में यह प्रावधान है कि अधिनियम के तहत प्रदत्त वन अधिकार पैतृक होगा, लेकिन वह परिवर्तन योग्य या हस्तांतरणीय नहीं होगा, और विवाहित व्यक्तियों के मामले में दोनों के नाम पर संयुक्त रूप से पंजीकृत किया जाएगा और एकल व्यक्ति के नेतृत्व वाले परिवार के मामले में एकल मुखिया के नाम पर होगा। प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी की अनुपस्थिति में, पैतृक अधिकार अगले परिजनों के पास जाएगा। दोनों के नाम अधिनियम के तहत प्रदत्त वन अधिकार के संयुक्त रूप से जो पति–पत्नी अंतरजातीय विवाहित हैं, पर पंजीकरण के लिए अधिनियम में कोई रोक नहीं है, बशर्ते आवेदक या तो एफ.डी.एस.टी. हो या एक ओ.टी.एफ.डी. के लिए मानदंडों को पूरा करता हो।

क्या धारा 3 (1) (क) के तहत दावों को इस आधार पर खारिज किया जा सकता है कि दावेदार के कब्जे वाले क्षेत्र की तुलना में वास्तविक खेती के तहत जमीन कम है।

एफ.आर.ए. नियमावली के नियम 12 (क) (8) में कहा गया है कि स्व–खेती के लिए मान्यता प्राप्त भूमि के अधिकार (धारा 3 (1) (क) के तहत) 4 हेक्टेयर की निर्दिष्ट सीमा के भीतर होगी, जिसमें

मवेशियों को रखने के लिए, फसल काटने के लिए और फसल कटाई के बाद की अन्य गतिविधियों, चक्रीय परती, पेड़ों की फसल और उपज के भंडारण जैसे खेती के लिए सहायक गतिविधियों के लिए उपयोग की जाने वाली वन भूमि शामिल है। जब ऐसी भूमि कब्जे में है, तो भूमि के दावे को इस आधार पर खारिज करना गलत है कि दावा किया गया पूरा क्षेत्र खेती के तहत नहीं है।

एफ.आर.ए. कानूनी रूप से पहले से मान्यता प्राप्त अधिकारों को कैसे प्रभावित करता है ?

एफ.आर.ए. की धारा 3 (1) (ञ) विशेष रूप से निम्नलिखित वन अधिकार को प्रदान करती हैः

> ''अधिकार जो किसी भी स्वायत्त जिला परिषद या स्वायत्त क्षेत्रीय परिषद के किसी भी राज्य के कानून या कानूनों के तहत मान्यता प्राप्त हैं या जिन्हें किसी राज्य के संबंधित जनजातियों के पारंपरिक या प्रथागत कानून के तहत जनजातीय अधिकारों के रूप में स्वीकार किया जाता है''।

तदनुसार, अधिनियम किसी भी राज्य कानूनों के तहत, या किसी राज्य में मान्यता प्राप्त किसी भी पारंपरिक या प्रथागत कानून के तहत सभी पूर्व–मौजूद अधिकारों को मान्यता प्रदान करता है। कई राज्यों में वन भूमि में अधिकारों को मान्यता देने वाले राज्य कानून हैं, जैसे झारखंड में छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम, 1908 और संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम, 1949। राज्यजिन के पास संविधान की छठी अनुसूची के तहत ऐसे क्षेत्र हैं, जहां स्वायत्त जिला परिषदों द्वारा लागू विशेष कानून हैं, जो वन भूमि में सामुदायिक अधिकारों को मान्यता देते हैं। ये अधिकार एफ.आर.ए. के तहत वन अधिकारों की परिभाषा में शामिल हैं।

एफ.आर.ए. के तहत मान्यता प्राप्त कई वन अधिकारों को पिछले विधानों के तहत अवैध गतिविधियों के रूप में माना गया है, जैसे कि संरक्षित क्षेत्रों में एम.एफ.पी. का संग्रहण। कुछ मामलों में ये जुर्माने और / या कारावास के साथ दंडनीय अपराध भी हैं। इस विरोधाभास को कैसे सुलझाया जाए ?

एफ.आर.ए.धारा 4 (1) में मूलभूत अधिकार निहित है, जिसके अंतर्गत वन निवासी एसटी और ओ.टी.एफ.डी. को वन अधिकारों की धारा 3 (1) के तहत परिभाषित और मान्यता प्राप्त अधिकार प्रदत्त हैं। यह प्रावधान, जो क़ानून के केंद्र में है, एक गैर–विरोधात्मक खंड (non & obstante clause) **''किसी भी अन्य वर्तमान में लागू कानून में निहित कोई भी प्रावधान के बावजूद''** के साथ शुरू होता है ?

इसका अर्थ है कि एफ.आर.ए. के तहत मान्यता प्राप्त और प्रदत्त वन अधिकार पिछले विधानों, नियमों, दिशानिर्देशों और यहां तक कि इसके विपरीत न्यायिक आदेशों को भी अधिभूत करते हैं, और इन अन्य कानूनों के अधिक्रमण में प्रभाव डालेंगे।

उदाहरण के लिए, भारतीय वन अधिनियम, 1927 के तहत, यदि कोई व्यक्ति आरक्षित वन या संरक्षित वन में मामूली वन उपज पर कब्जा करते हुए पाया जाता है, तो एक कानूनी परिकल्पना है कि ऐसी एम.एफ.पी. सरकार की संपत्ति होती है। ऐसी एम.एफ.पी. का संग्रह अपने आप में एक वन अपराध है, ऐसी स्थिति में, गिरफ्तारी, तलाशी और जब्ती, अभियोजन सहित गंभीर दंडात्मक परिणामों के भागी होंगे, और अगर दोषी ठहराया जाता है, तो जेल जाने की संभावना होगी। यदि ऐसा व्यक्ति एम.एफ.पी. का परिवहन कर रहा है, तो राज्य एम.एफ.पी. पारगमन विधानों की विविधता के तहत आगे भी दंड दिए जाते हैं।

हालांकि, एफ.आर.ए. वन निवासी एसटी और ओ.टी.एफ.डी. के लिए एम.एफ.पी. पर स्वामित्व अधिकार देता है, और एम.एफ.पी.के निष्कर्षण, संग्रह और परिवहन का प्रबंधन करने के लिए ग्राम सभा को शक्ति प्रदान करता है। यह अपराध के बिल्कुल विपरीत हैं।

चूंकि एम.एफ.पी. के स्वामित्व का अधिकार एफ.आर.ए. की धारा 4 (1) के तहत मूलभूत प्रदत्त अधिकार है, केंद्रीय के साथ-साथ राज्य के प्रावधानों जो आरक्षित वनों से एम.एफ.पी. के निष्कर्षों को आपराधिक बनाता है, उसे वन निवासी एसटी और ओ.टी.एफ.डी. के संबंध में अवरोधित तथा अमान्य माना जाएगा। ऐसे कानून, हालांकि, ऐसे व्यक्तियों के खिलाफ जो एफ.आर.ए. के तहत अधिकारधारक नहीं हैं, काम करना जारी रखेंगे जो एफ.आर.ए. के प्रावधानों के अतिरिक्त, ग्राम सभा को ऐसे व्यक्तियों के खिलाफ स्वयं आवश्यक कार्रवाई करने की अनुमति देता है।

एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन को कभी-कभी अदालत के आदेशों के विपरीत माना जाता है और इसलिए अदालत की अवमानना की संभावना होती है। ऐसी स्थितियों से कैसे निपटा जाए ?

वैधानिक व्याख्या का एक अच्छी तरह से स्वीकृत सिद्धांत है कि संसद का एक अधिनियम माननीय न्यायालयों के पूर्ववर्ती निर्णयों और आदेशों को रद्द करता है, और यह भी विशेष रूप से एफ.आर.ए. कीधारा 4 (1) में व्यक्त किया गया है, जो एक स्पष्ट गैर-विरोधात्मक खंड के साथ शुरू होता है, इस प्रकार हैः

‘‘(1) (किसी भी अन्य वर्तमान में लागू कानून में निहित कोई भी प्रावधान के बावजूद,) और इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन है, केंद्र सरकार “में वन अधिकारों को मान्यता देती है और प्रदत्त करती है”

जहां एक अदालत द्वारा बिना कानूनी, तथ्यों या एफ.आर.ए. के प्रावधानों को ध्यान में रखे, आदेश दिये जाते हैं, वहां संबंधित कार्यकारी प्राधिकरणों को, कानून की उचित प्रक्रिया का पालन करते हुए, इसे माननीय न्यायालय के ध्यान में लाना चाहिए।

एफ.आर.ए. के तहत मान्यता प्राप्त भूमि के हस्तांतरण के लिए कोई प्रावधान क्यों नहीं रखा गया है ?

आकलन से पता चला है कि संवैधानिक और सांविधिक सुरक्षा उपायों के बावजूद, जनजातीय लोग विभिन्न कारणों से तीव्र गति से भूमि गवा रहे हैं। एफ.आर.ए. के तहत, भूमि को अदेय और अहस्तांतरणीय रखा गया है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वह भूमि गवाईं नहीं जाए और यह भी सुनिश्चित किया गया है कि केवल योग्य दावेदार ही धारक का दावा कर सकें।

एफ.आर.ए. की धारा 3 (1) (क) में ‘‘आजीविका के लिए स्व-खेती” के अर्थ में क्या गतिविधियाँ शामिल हैं ?

‘शब्द ‘‘स्व खेती” का वर्णन एफ.आर. नियमावली के नियम 12क (8) में किया गया हैः

> ‘‘12 .क(8) धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (क) के तहत मान्यता प्राप्त स्व-खेती के लिए भूमि अधिकार विनिर्दिष्ट सीमा के भीतर होगा, जिसमें खेती के लिए सहायक गतिविधियों, जैसे कि, मवेशियों को रखने के लिए, फसल काटने और कटाई के बाद कीअन्य गतिविधियों, चक्रीय परती, पेड़ की फसलों और उपज के भंडारण के लिए उपयोग की जाने वाली वन भूमि भी

शामिल है।''

इस प्रकार, एफ.आर.ए. और एफ.आर. नियमावली इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि कृषि में न केवल खेती शामिल है, बल्कि अन्य संबद्ध और सहायक गतिविधियाँ भी शामिल हैं। यह भी ध्यान दें कि नियम 2(1) (ख) के तहत, 'प्रमाणिक आजीविका की आवश्यकता' शब्द का अर्थ, स्वयं और परिवार की आजीविका आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परिभाषित किया गया है जिसमें ऐसे अधिकारों के प्रयोग से उत्पन्न अधिशेष उपज की बिक्री भी शामिल है।

क्या जिस व्यक्ति को वन अधिकार प्रदत्त हैं, या जिस व्यक्ति को इस तरह के अधिकार प्राप्त हैं, उसे ऐसी भूमि के भू- उपयोग को बदलने की अनुमति दी जा सकती है ?

एफ.आर.ए. की धारा 3(1) (क) के तहत, वन अधिकार में पर्यावास के लिए अधिकार और रहने तथा स्व-खेती के लिए अधिकार शामिल है। जैसा कि एफ.आर. नियमावली के नियम 12क (8) के तहत कहा गया है, स्व-खेती में खेती के लिए संबद्ध या सहायक गतिविधियों की बहुतायत जैसे कि मवेशियों को रखने के लिए, फसल काटने के लिए और अन्य कटाई के बाद की गतिविधियों, चक्रीय परती, पेड़ की फसलों और उपज के भंडारण शामिल हैं। इस तरह के उपयोग के लिए व्यक्ति किसी भी भूमि का उपयोग कर सकता है। हालांकि, किसी भी अन्य उद्देश्य के लिए भूमि का उपयोग करना कानूनी तौर पर उचित नहीं होगा, क्योंकि वन अधिकार एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए अधिकार प्रदत्त है।

क्या अधिकारों की मान्यता प्रक्रिया पूरी किए बिना अतिक्रमण के आधार पर एफ.आर.ए. के तहत वन भूमि पर किसी रहने वाले को बेदखल किया जा सकता है ?

यदि एफ.आर.ए. के तहत संबंधित वन भूमि पर दावा प्रक्रियाधीन है तो राज्य किसी भी वन निवासी को बेदखल नहीं कर सकता है। यदि डी.एल.सी. द्वारा दावा खारिज करने की सूचना मिलने के पश्चात अगर दावेदार ने कानून के तहत उपलब्ध उपायों का प्रयोग नहीं किया तो फिर ऐसे दावेदार को भारतीय वन अधिनियम, 1927 और प्रासंगिक राज्य कानून के तहत प्रदान की गई प्रक्रिया का पालन करने के बाद बेदखल किया जा सकता है। एफ.आर.ए. में दावे के अस्वीकृति के बाद स्वयं से अतिक्रमण हटाने के लिए कोई प्रावधान या प्रक्रिया नहीं है, क्योंकि यह एफ.आर.ए. का विषय नहीं है।

एक बार सी.एफ.आर. अधिकारों सहित अधिकारों की मान्यता और अधिकार निहित करने की प्रक्रिया पूरी हो जाने के बाद, यदि कुछ वर्षों के बाद यह देखा जाए कि जंगलों का क्षरण हो रहा है तो क्या उपाय उपलब्ध हैं ?

विभिन्न कारणों से तीव्र गति से भूमि गवा रहे हैं। एफ.आर.ए. के तहत, भूमि को अदेय और

एफ.आर.ए. की धारा 5वन निवासियों की ग्राम सभा को अधिकार और शक्ति प्रदान करते हुए, एक जिम्मेदारी भी सौंपती है ताकि पारिस्थितिक संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके और सी.एफ. आर. का प्रबंधन करते समय सतत विकास के सिद्धांतों का पालन किया जा सके। यदि ग्राम सभा अपने सी.एफ.आर. के भीतर ऐसे कार्यों में संलिप्त पाई जाती है जो जंगलों, जैव विविधता, वन्य जीवन या अन्य प्राकृतिक संसाधनों के लिए हानिकारक हैं तो इसके लिए पर्याप्त पर्यावरण संरक्षण कानूनहै जिसे इस स्थिति में सुधार लाने के उद्देश्य से सक्रिय किया जा सकता है।

संक्षिप्त एवं परिवर्णी शब्द

बी.पी.एल.	गरीबी रेखा से नीचे
सीएफआर	सामुदायिक वन संसाधन
डीएलसी	जिला स्तरीय समिति
एफडीएसटी	वन निवासी अनुसूचित जनजाति
एफआरए	अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006
एफआरनियमावली	अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) नियमावली, 2008 (2012 में संशोधित)
एफआरसी	वन अधिकार समिति
1994 अधिनियम	हिमाचल प्रदेश पंचायती राज अधिनियम, 1994
आईएवाई	इंदिरा आवास योजना
जेएफएम	संयुक्त वन प्रबंधन
एमएफपी	लघु वन उत्पाद
मनरेगा	महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005
एमओईएफएंडसीसी	पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
ओटीएफडी	अन्य परम्परागत वन निवासी
पेसा	पंचायतों के प्रावधान (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम, 1996
पीवीटीजी	विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह
एससीए	विशेष केंद्रीय सहायता
एसडीएलसी	उप–मंडल स्तरीय समिति
एसटी	अनुसूचित जनजाति
टीएसएस	जनजातीय उप–स्कीम

Government of India
Ministry of Tribal Affairs

Shastri Bhawan, A – Wing
Dr. Rajendra Prasad Road,
New Delhi - 110 001
Tel: +91-11-26182429 Fax: +91-11-26182094
Website: www.tribal.gov.in;
www.tribal.nic.in

Empowered lives.
Resilient nations.

United Nations Development Programme
Post Box No. 3059, 55 Lodhi Estate
New Delhi - 110 003
Tel: +91-11-46532333 Fax: +91-11-24627612
Email: info.in@undp.org
Website: www.in.undp.org